नवम्बर / दिसम्बर 2025

रूहानी रिश्ता

साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर

विषय सूची

4 चढ़ चंना ते कर रुशनाई
5 सतगुरु के लिए हमारा उपहार
10 सतगुरु से हमारा रिश्ता
16 परमात्मा के प्यार का जादू
17 मनुष्य-जन्म—एक उपहार
22 कर्म-प्रधान संसार
27 मृत्यु सिर पर मंडरा रही है
33 जज़्बात के बारे में एक नज़रिया
39 संतुलन बनाए रखना
43 अपना भविष्य ख़ुद बनाएँ
45 चल री सुरत अब गुरु के देश
50 सुकून वाली जगह की खोज

रूहानी रिश्ता

Science of the Soul Research Centre
Guru Ravi Dass Marg, Pusa Road, New Delhi-110005, India
Copyright © 2025 Science of the Soul Research Centre®

बिना स्रोत के कुछ लेख और कविताएँ इस पत्रिका के लेखकों द्वारा लिखी गई हैं।

भाग 21 • अंक 6 • नवम्बर दिसम्बर 2025

चढ़ चंना ते कर रुशनाई

चढ़ चंना ते कर रुशनाई, ज़िकर करेंदे तारे हू।
गलियां दे विच फिरन निमाणे, लालां दे वणजारे हू।
शाला कोई न थिवे मुसाफ़र, कक्ख जिन्हां तों भारे हू।
ताड़ी मार उडा न सानूं, आपे उड्डणहारे हू।

हज़रत सुलतान बाहू

सतगुरु के लिए हमारा उपहार

कल्पना कीजिए कि अगर हम अपने सतगुरु को कोई ऐसा उपहार दे सकें जो उन्हें सचमुच पसंद आए। शायद हम सब उन्हें कुछ न कुछ देना चाहेंगे ताकि उन्होंने हमें जो कुछ भी दिया है और निरंतर दे रहे हैं, उन सब चीज़ों के लिए, भले थोड़ा-सा ही सही, हम उनका शुक्रिया अदा कर सकें। वह अपने शिष्यों से किसी भी दुनियावी चीज़ की न तो कभी चाहत रखते हैं और न ही उनके द्वारा दी गई कोई दुनियावी चीज़ स्वीकार करते हैं। अगर हम उन्हें कोई सांसारिक उपहार नहीं दे सकते तो फिर क्या हम उन्हें कुछ ऐसा दे सकते हैं जो उनके लिए मायने रखता हो? हाँ, बिलकुल।

हम जानते हैं कि हम सब सतगुरु से किए गए वायदों को निभाकर एक अच्छे इनसान बन सकते हैं और हुक्म में रहकर उनके शुक्रगुज़ार हो सकते हैं। हम उन्हें अपना प्रेम और भक्ति भी समर्पित कर सकते हैं। लेकिन इन सबमें से सबसे मूल्यवान उपहार जो हम उन्हें दे सकते हैं, वह है हमारा ध्यान जो रूहानी मार्ग पर सोने से भी अधिक मूल्यवान है।

इनसान होने के नाते, हम यह चुन सकते हैं कि किस चीज़ पर ध्यान देना है। हमारे पास विवेक की शक्ति है और हम इस लायक़ हैं कि जाग्रत अवस्था में हम अपने विचारों को और अपने ध्यान को दिशा दे सकते हैं। जब हम अपने ध्यान को लगातार अपने सतगुरु पर केंद्रित रखते हैं तब हमारा वह सारा दिन सतगुरु और उनकी सेवा में समर्पित हो जाता है।

पर यह इतना भी आसान नहीं है, है ना? चाहना और करना—ये दोनों बिलकुल अलग बातें हैं। हम सब यही चाहते हैं कि हमारा ध्यान निरंतर हमारे सतगुरु की ओर रहे और हम ऐसे सच्चे शिष्य बन सकें जिनका ध्यान सदा अपने रूहानी उद्देश्य पर केंद्रित रहे। हो सकता है कि इस मार्ग पर रूहानी तरक़्क़ी कर चुके ऐसे शिष्य भी हों जो ऐसी अवस्था प्राप्त चुके हैं लेकिन बाक़ी सब कभी सफल होते हैं और कभी असफल—आम तौर पर अधिकांश जीव ऐसा करने में असफल ही होते हैं।

हमें इस असफलता से निराश नहीं होना चाहिए। ऐसी चाहत का होना भी प्रशंसा के योग्य है।

आज के इस अत्यंत भाग-दौड़वाले और तनावपूर्ण जीवन में, कितने ऐसे ख़ुशनसीब जीव हैं जो ये चाहते हैं कि उनका ध्यान उनके सतगुरु की ओर रहे? हम कितने भाग्यशाली हैं कि हम हर रोज़ भजन-सिमरन करने की जितनी भी थोड़ी-बहुत कोशिश करते हैं, उसे अपने सतगुरु को समर्पित कर देते हैं।

इसके साथ ही हमें यह एहसास भी होना चाहिए कि हम अपनी सभी सांसारिक ज़िम्मेदारियों को निभाते हुए अपने रूहानी विकास के लिए और क्या कर सकते हैं। हमें अधिक सचेत होकर इस बारे में सोच-विचार करना चाहिए कि हम अपना ध्यान किस तरफ़ लगा रहे हैं और सतगुरु को दिए जानेवाले ध्यान रूपी उपहार को बेहतर कैसे बनाया जा सकता है?

संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि हमें अच्छे इनसान बनने का प्रयास करना चाहिए। इसका अर्थ है कि हमें अपने व्यवहार को लेकर सजग रहना चाहिए, इसमें हमारा खानपान और रहन-सहन भी शामिल है। हमें इस बात को सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि हमारा व्यवहार मुक्ति प्राप्त करने के हमारे रूहानी मक़सद के मुताबिक़ है।

इस सबके लिए हमें अपने विचारों पर ध्यान देने की ज़रूरत है। यदि हम निरंतर सतर्क न रहें तो मन हमें अहंकार और इंद्रियों के ज़रिए बहकाकर अपने मक़सद में क़ामयाब हो जाता है।

हमारे रूहानी सफ़र का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग बाक़ी बचे हुए जीवन में हर रोज़ कम से कम ढाई घंटे भजन-सिमरन करना है। इसमें सबसे ज़्यादा अहमियत ध्यान की है। सिमरन, ध्यान और भजन तीनों के लिए हमारे ध्यान का स्थिर और एकाग्र होना बहुत ज़रूरी है।

इस मार्ग पर चलते हुए हम इतना तो जान गए हैं कि अगर दिन-भर हमारा ध्यान हमारे उद्‌देश्य पर केंद्रित नहीं रहता तो हमारे लिए भजन-सिमरन कर पाना कितना ज़्यादा मुश्किल हो जाता है। अगर हमने दिन-भर मन को क़ाबू

में नहीं रखा तो फिर हम यह उम्मीद कैसे कर सकते हैं कि भजन-सिमरन के समय यह वश में आ जाएगा? हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी फ़रमाते हैं:

> *संतमत की शिक्षा के अनुसार रहना, संतमत के वातावरण में रहना, अपने आप में भजन ही है। आपको चाहिए कि अपने प्रतिदिन के भजन का वातावरण बनाने के लिए अपने जीवन के हर क्षण का उपयोग करें। जो भी काम आप करें वह भजन में बैठने के लिए आपके अंदर शौक़ और प्यार पैदा करे।*
>
> *जीवत मरिए भवजल तरिए*

हम जिन चीज़ों पर ध्यान देते हैं उनसे हमारे जीवन की प्राथमिकताओं और उद्देश्य की झलक मिलनी चाहिए। हम उन उद्देश्यों को लेकर कितने संजीदा हैं इसका पता इस बात से चलता है कि हमारी रहनी कैसी है, हमारी सोच क्या है और हम अपने सतगुरु के हुक्म में कितना रहते हैं। जहाँ तक मुमकिन हो सके हमें पूरा दिन ऐसे बिताना चाहिए कि हम ख़ुद को भजन-सिमरन के लिए अधिक से अधिक तैयार कर सकें। क्योंकि हर वह शिष्य जो परमात्मा से मिलाप करना चाहता है उसके जीवन का सबसे ज़रूरी काम है सिर्फ़ भजन-सिमरन करना।

सतगुरु द्वारा सिखाई गई भजन-सिमरन की युक्ति के तीन भाग हैं: सिमरन, भजन और ध्यान। सिमरन से भाव है उन पाँच पवित्र लफ़्ज़ों को दोहराना, जो हमें नामदान के समय बताए जाते हैं। भजन में हमें अंदर गूँज रहे शब्द को सुनने के लिए कहा जाता है और ध्यान में अपने सतगुरु के स्वरूप को सामने लाने के लिए। सिमरन सबसे पहला और शुरू में सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है और सिमरन में हमें अपने फैले हुए ख़याल को अंतर्मुख करने का अभ्यास करना है। भजन-सिमरन वह उपहार है जिसे हम अपने सतगुरु को दे सकते हैं, जिसे वह हमेशा पसंद करते हैं।

सतगुरु चाहते हैं कि हम तीसरे तिल पर पहुँचे। सिमरन वह युक्ति है जो फैले हुए ख़याल को इकट्ठा करके तीसरे तिल पर एकाग्र करने के लिए

हमें समझाई जाती है। सतगुरु हमें समझाते हैं कि हमारा सच्चा रूहानी सफ़र उस समय शुरू होता है जब हम तीसरे तिल पर पहुँच जाते हैं, इसलिए हमें यहाँ पहुँचने के लिए लगातार कोशिश करते रहना चाहिए। महाराज सावन सिंह जी ने फ़रमाया है:

> *इसलिए पहला ज़रूरी काम है बिखरे हुए ख़याल को तीसरे तिल में इकट्ठा करते हुए अपने शरीर रूपी प्रयोगशाला में प्रवेश करना।... यह हमारा काम है, हमें ही इसे करना है और अभी इसी ज़िन्दगी में करना है।*
>
> परमार्थी पत्र, भाग2

आपने यह भी फ़रमाया है:

> *यह कोई मुश्किल काम नहीं है। बस सबकुछ ध्यान को तीसरे तिल में पूरी तरह एकाग्र करने पर निर्भर है जिसमें कोई दूसरा विचार ध्यान में प्रवेश न करे और ध्यान को केन्द्र से बाहर न ले जाये।*
>
> परमार्थी पत्र, भाग2

हमारा ख़ज़ाना हमारे सतगुरु का नूरी स्वरूप है और स्वयं वह शब्द है जो हमारे इंतज़ार में है। असल में यह शब्द क्या है? सतगुरु का नूरी स्वरूप क्या है? और क्यों हमें इससे जुड़ने की ज़रूरत है? शब्द, जिसे 'वर्ड' भी कहा जाता है, परमात्मा की सृजनात्मक शक्ति है।

संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि शुरू में केवल परमात्मा का ही अस्तित्व था। जब परमात्मा ने सृष्टि की रचना का हुक्म दिया तब यह सृजनात्मक शक्ति प्रकट हो गई जिससे परमात्मा ने हर चीज़ का सृजन कर दिया। हम सभी शब्द द्वारा उत्पन्न हुए हैं और आख़िरकार इसी शब्द में समा जाएँगे। संत-महात्मा समझाते हैं कि शब्द के बिना हर चीज़ की हस्ती समाप्त हो जाएगी।

सदियों से सभी पूर्ण संत-महात्माओं का मुख्य रूहानी उपदेश एक ही रहा है: परमात्मा स्वयं शब्द है और शब्द के ज़रिए उसने हर वस्तु की रचना की है। महाराज सावन सिंह जी ने फ़रमाया है:

सबका आदि और अन्त शब्द है। सब स्थूल तत्त्व, आकाश आदि, सूक्ष्म तत्त्व या तन्मात्रा, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध सब शब्द ही हैं। जो कुछ है शब्द ही है, इसलिये उससे जो कुछ प्रकट हो वह भी शब्द के सिवाय और क्या हो सकता है। शब्द हमें पैदा करनेवाला है, वह हमारा आधार है। हम शब्द के हैं और शब्द हमारा है।

गुरुमत सिद्धान्त, भाग पहला

यह निराकार शक्ति जिसे किसी भी तरह से साधारण इनसानी इंद्रियों द्वारा देखा या अनुभव नहीं किया जा सकता, हर जगह व्याप्त है और हर वस्तु का आधार है। यह शक्ति सभी पूर्ण संतों के उपदेश का आधार है। यही सुरत-शब्द योग के मार्ग का सार है। सुरत-शब्द योग का मार्ग हमें बताता है कि हमारी आत्मा इसी दिव्य शक्ति का अंश है जो कि परमात्मा की अपनी शक्ति है। इस शक्ति से जुड़ने के लिए हमें अपने ध्यान को प्रेम और भक्ति-भाव के साथ सतगुरु को समर्पित करना चाहिए। हमारा ध्यान हमारा निराला और निजी उपहार है। आइए इसे हर रोज़ अपने सतगुरु को भेंट करें।

सतगुरु शब्द स्वरूप हैं। रहें अर्श मँझार॥
तू भी सुरत स्वरूप है। रहो गुरु की लार॥
नैनन में गुरु रूप है। तू नैन उघार॥
सरवन में गुरु शब्द है। सुन गगन पुकार॥
राधास्वामी कह रहे। यह मारग सार॥
जो जो मानें भाग से। सो उतरें पार॥

सारबचन संग्रह

सतगुरु से हमारा रिश्ता

हम में से बहुत-से सत्संगी कई वर्षों से इस मार्ग पर चल रहे हैं। समय के साथ हम सभी ने यह महसूस किया है कि यह मार्ग हमारे जीवन में कितना मायने रखता है—यह सोचकर भी सिहरन होती है कि अगर हम इस मार्ग पर न होते तो हम ज़िंदगी कैसे जीते। शायद हमें यह एहसास हो गया हो कि हम कितने ख़ुशनसीब हैं कि पूर्ण देहधारी सतगुरु ने हमें खोज लिया और हमें नामदान बख़्श दिया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारे सतगुरु से हमारा रिश्ता हमारे जीवन में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रिश्ता है।

यह रिश्ता इतना पुराना है कि हम सोच भी नहीं सकते—असल में यह नाता उस पल से है जब हमारा जन्म हुआ था या शायद उससे भी पहले से। यह रिश्ता तब शुरू हुआ जब हमारे दिल में परमात्मा के लिए चाहत उठी और परमात्मा ने हमारे अंदर अपने मिलाप की तड़प पैदा कर दी। उसी पल से हम सही मायनों में उससे नाता जोड़ने का मार्ग ढूँढने लगे।

हम जानते हैं कि जो सच्चे दिल से परमात्मा से मिलाप करना चाहते हैं, उन्हें किसी ऐसे देहधारी सतगुरु की खोज करनी चाहिए जिससे वे नाता जोड़ सकें और प्रेम कर सकें। केवल देहधारी सतगुरु ही हमारे सामने उस परमात्मा रूपी परम सत्य के भेद को प्रकट कर सकते हैं जो किसी भी तरह के सोच-विचार और कल्पना से परे है। इसके अलावा, सतगुरु के लिए हमारे प्यार और हमारे लिए सतगुरु के प्यार की अहमियत को हमें कभी भी कम नहीं समझना चाहिए। आख़िरकार यही परमात्मा की खोज में हमारी मदद करेगा।

सच तो यह है कि हम कभी भी सतगुरु की खोज नहीं करते बल्कि जब शिष्य तैयार होता है तब सतगुरु ख़ुद-ब-ख़ुद उसे खोज लेते हैं। और शायद यही वजह है कि हमें इस दुनिया में कहीं भी सुकून महसूस नहीं होता। हमें हमेशा ऐसा लगता है कि जैसे हम इस दुनिया के नहीं हैं। शायद इसी वजह से हमें इस दुनिया में अकेलापन भी महसूस होता है।

संतजन बताते हैं कि यह अकेलापन एक ज़रिया है जिससे हम उस प्रभु की खोज करने के लिए बेचैन हो जाते हैं। अगर हम हमेशा इस दुनिया में सुखी होते तो हमारे मन में कभी भी परमात्मा का ख़याल तक न आता। हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी ने फ़रमाया है कि "हमारा अकेलापन आत्मा की गहरी तड़प है जो अपने परमपिता के पास वापस लौटना चाहती है।"

सतगुरु ने हमें यह भी समझाया है कि हम केवल यह शरीर नहीं हैं। हम रूहानी जीव हैं जो अब उसी शांति और परम आनंद के धाम में वापस लौटना चाहते हैं जहाँ से हम असल में आए हैं। और हम यह भी जान चुके हैं कि जिस तरह हमारा अस्तित्व सिर्फ़ शारीरिक नहीं है, उसी तरह हमारे सतगुरु भी सिर्फ़ शरीर नहीं हैं। सतगुरु का एक आंतरिक स्वरूप भी है जो रचयिता के साथ एकरूप है। और हमारे मन में सतगुरु के लिए तथा उनके अंदर हमारे लिए जो प्यार है उसके ज़रिए ही सतगुरु हमें वापस हमारे रचयिता के पास लेकर जाते हैं।

आख़िरकार सिर्फ़ एक ही बात महत्त्वपूर्ण है—हमारा अपने सतगुरु से प्रेम और उनका हमसे प्रेम। महाराज चरन सिंह जी ने फ़रमाया है कि इस दुनिया में सतगुरु और शिष्य के रिश्ते से गहरा अन्य कोई रिश्ता नहीं है। और इसकी पहल सतगुरु की ओर से होती है। उनके प्रेम के फलस्वरूप हम भी उनसे प्रेम करने लगते हैं।

पूर्ण सतगुरु हमारे अंदर अपने लिए कशिश किस तरह पैदा करते हैं इस बारे में बड़े महाराज जी *गुरुमत सिद्धान्त* के दूसरे भाग में फ़रमाते हैं:

> *गुरु में ख़ास तौर पर प्रेम की कशिश का जलवा होता है जो सच्चे तालिब को अपनी ओर खींचता है तथा संसार की समस्त निआमतों से उसके मन को विमुख करके अपनी ओर ले आता है।... गुरु की जलाली शान, बेरुखी, मस्तक पर बल डालना और मुँह फेरना, जमाली शान (सुन्दर रूप), जलवा दिखाना (दर्शन प्रदान करना), हार्दिक सहानुभूति के साथ बातें करना, मुस्कराना—सब ही बातें सच्चे तालिब को बेधती और मोहित करती चली जाती हैं।*

हमारी आत्मा उन्हें पहचानती है और उनसे एक होना चाहती है। सबसे अद्भुत बात तो यह है कि हमारे सतगुरु को इसी मक़सद से भेजा गया है।

कभी-कभी हमें लगता है कि हम भटक गए हैं। हमें लगता है कि हमारे सतगुरु हमसे इतने दूर हैं कि हम उन तक नहीं पहुँच सकते। लेकिन वह हमें यक़ीन दिलाते हैं कि वह सदा हमारे साथ हैं। वह हमारा साथ कभी नहीं छोड़ेंगे। अब यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम भी अपना फ़र्ज़ निभाएँ। इस मार्ग पर सतगुरु के साथ चलना एक साँझेदारी है जिसमें मुख्य भूमिका सतगुरु ही निभा रहे हैं। हम उनकी करनी को नहीं समझ सकते और शायद इस सारे सफ़र में हमारी भूमिका बहुत छोटी है। अपनी बेबसी और अज्ञानता को ध्यान में रखते हुए हमें केवल वही करना चाहिए जो हमारे सतगुरु हमें करने के लिए कहते हैं।

अपनी तरफ़ से जो थोड़ा-बहुत हम कर सकते हैं वह है भजन-सिमरन करना और इस मार्ग पर दृढ़तापूर्वक चलने की कोशिश करना—इस तरह हमें अपना फ़र्ज़ निभाना है। तीसरे तिल से नीचे-नीचे हम जो कर सकते हैं, हमें करना है जबकि सतगुरु अंदर अपना कर्त्तव्य निभा रहे हैं जिसे हम अभी देख नहीं सकते। अगर हमें यह लगता है कि यह कार्य बहुत धीमी गति से हो रहा है तो इसे तेज़ करने का एक ही तरीक़ा है—मेहनत करना। इसके बाद सतगुरु पर यह भरोसा रखना चाहिए कि उचित समय आने पर, वह हमें सब कुछ दे देंगे।

सतगुरु हमारे कर्म अपने ऊपर नहीं लेते—वह हमारे प्रारब्ध को नहीं बदलते। लेकिन कर्मों के भुगतान में वह हमारी मदद करते हैं। वह हमें इतनी हिम्मत बख़्श देते हैं कि हम सहज-भाव से उन कर्मों का भुगतान कर देते हैं और हमें वह बोझ हल्का महसूस होता है, हमारे लिए उसे उठाना आसान हो जाता है।

वह हमें नए कर्म करने से भी नहीं रोकते क्योंकि वह जानते हैं कि जीवन गुज़ारते हुए नए कर्म करने से बचा नहीं जा सकता। हमें यह बताया गया है कि सिर्फ़ भजन-सिमरन करने से इन नए कर्मों का हिसाब बहुत हद

तक चुकता हो जाता है। और अगर हम नैतिक जीवन जीते हैं तो हम नए कर्मों का बोझ बढ़ाने से बच जाते हैं। फिर भी, हमें इस बात को स्वीकार करना पड़ेगा कि हम कई बार ग़लत लफ़्ज़ बोल जाते हैं या ग़लत कर्म कर बैठते हैं जिसके लिए शायद बाद में हमें शर्मिंदगी भी महसूस होती है या फिर इसी वजह से हमारा भजन-सिमरन भी बहुत डाँवाडोल रहता है। मगर फिर भी, सतगुरु हमसे नाराज़ नहीं होते। इस बारे में महाराज जी ने एक बार किसी से फ़रमाया:

> *मैं आपको इस बात का यक़ीन दिला दूँ कि हम कभी उसे नाराज़ नहीं करते। हम उसे नाराज़ कैसे कर सकते हैं?... जब वह जानता है कि हम कितने बेबस हैं, मन के कितने अधीन हैं, हर क़दम पर ठोकर खाते हैं।... लेकिन संतमत के उसूलों के अनुसार जीवन बिताकर, भजन-सिमरन को पूरा वक़्त देकर हम उसे ख़ुश ज़रूर कर सकते हैं। ऐसा करने से वह ज़रूर ख़ुश होता है, लेकिन उसे नाराज़गी किसी बात से नहीं होती।*
>
> *संत संवाद,* भाग 3

यह जानते हुए कि हम उनकी ख़ुशी प्राप्त करने के लिए क्या कर सकते हैं; हमें चाहिए कि हम सिर्फ़ उनसे प्रेम करें और उनके हुक्म का पालन करें। इस दुनिया में हमारे लिए उनके हुक्म का पालन करना ही प्रेम है। महाराज जी अक़्सर फ़रमाते थे कि प्रेम भजन-सिमरन द्वारा पैदा होता है। हम भजन-सिमरन द्वारा अपने प्रेम को बढ़ा सकते हैं। यह सच है कि जब हम सतगुरु की हुज़ूरी में होते हैं तब हम उनके प्रति गहरा प्रेम महसूस करते हैं। लेकिन कई बार वह प्रेम भी महसूस नहीं होता। फिर भी सतगुरु हमें यक़ीन दिलाते हैं कि जब हम अंदर उनसे मिलाप कर लेंगे तब हमें समझ आएगा कि सतगुरु से प्रेम करने के क्या मायने हैं।

तब तक हम केवल उनकी आज्ञा का पालन कर सकते हैं। हम केवल भजन-सिमरन के अभ्यास में लगे रह सकते हैं, भले ही इसके लिए हमें मन के साथ कितना भी संघर्ष क्यों न करना पड़े। संत-महात्मा हमें पहले

ही चेतावनी दे चुके हैं: यह संघर्ष जीवन-भर भी चल सकता है। क्योंकि हम अपने चंचल मन को क़ाबू करने की कोशिश में लगे हैं जो पल-पल हमें भटकाता रहता है।

असल में अपने ख़याल को सांसारिक कार्य-व्यवहार की तरफ़ से रोकने का केवल एक ही तरीक़ा है: वह है हमारा सिमरन—मन ही मन उन लफ़्ज़ों को दोहराना जो सतगुरु ने हमें बताए हैं। सिर्फ़ सिमरन ही वह ज़रिया है जो हमारे विचारों के प्रवाह को रोक सकता है और चाहे कुछ पलों के लिए ही सही, यह हमारे मन को स्थिर कर सकता है। लेकिन ध्यान के ज़रिए इन पलों को लंबा किया जा सकता है। और जब हम भजन के लिए बैठते हैं तब हमें फिर से स्थिर होकर सिर्फ़ सुनना है। हो सकता है कि हमें कुछ भी सुनाई न दे लेकिन हमें पूरे ध्यान से सुनना चाहिए। केवल सिमरन और भजन ही वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने सतगुरु के शब्द-स्वरूप से जुड़ सकते हैं।

लेकिन हममें से अधिकतर लोगों के लिए भजन-सिमरन करना एक संघर्ष है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हम सभी ने कभी न कभी निराशा या दु:ख महसूस किया है, जब हमें ऐसा लगता है कि हमारी कोई तरक़्क़ी नहीं हो रही। मगर हो सकता है कि हमारे इस संघर्ष का मक़सद हमारे अंदर सतगुरु के प्रति विरह की भावना को बढ़ाना हो।

असल में हम किस चीज़ के लिए तड़प रहे हैं? हम भजन-सिमरन शायद इसलिए करते हैं क्योंकि हम अपने सतगुरु के नूरी स्वरूप का दर्शन करना चाहते हैं। अगर हम बाहर उनके साथ नहीं रह सकते तो हम अंदर उनके साथ रहना चाहते हैं। मगर हमें बताया गया है कि सतगुरु का आंतरिक स्वरूप शब्द ही है। दूसरे शब्दों में कहें तो सतगुरु का असल स्वरूप शब्द-धुन और प्रकाश है। अगर हमारे अंदर इस शब्द-धुन और प्रकाश के लिए तीव्र इच्छा है तो इसका अर्थ है कि हम अपने सतगुरु के नूरी स्वरूप के लिए ही तड़प रहे हैं। असल में ये एक ही हैं।

डाई टू लिव में महाराज जी फ़रमाते हैं: सतगुरु के दर्शन की तड़प हमें भजन-सिमरन की ओर ले जाती है। और जब हमें बाहर सतगुरु के दर्शन नहीं होते तब हम उन्हें अंदर ढूँढने की कोशिश करेंगे। उनके दर्शन की चाह ही हमें अंतर की ओर ले जाएगी और हमारी सुरत उस मुक़ाम पर पहुँच जाएगी जहाँ हमारे सतगुरु मौजूद होंगे, जहाँ वह सदा हमारे अंग-संग रहेंगे।

सजनी रजनी घटती जाइ।
पल पल छीजै अवधि दिन आवै, अपनौं लाल मनाइ॥
अति गति नींद कहा सुख सोवै, यहु औसर चलि जाइ॥
यहु तन बिछरें बहुरि कहँ पावै, पीछें ही पछिताइ॥
प्राणपति जागै सुंदरि क्यों सोवै, उठि आतुर गहि पांइ॥
कोमल बचन करुणा करि आगैं, नख सिख रहु लपटाइ॥
सखी सुहाग सेज सुख पावै, प्रीतम प्रेम बढ़ाइ॥
दादू भाग बड़े पिव पावै, सकल सिरोमणि राइ॥

सन्त दादू दयाल

परमात्मा के प्यार का जादू

इनसान स्पष्ट रूप से समझ नहीं पाता और इसकी सोच बहुत सीमित है। जब हमें लगता है कि हम बेसहारा हैं तब हो सकता है कि वह हमारी रक्षा कर रहा हो। जब हमें ताज्जुब होता है कि वह हमारी मदद क्यों नहीं कर रहा तब हो सकता है कि वह हर क़दम पर हमारा साथ दे रहा हो। जब हमें लगता है कि कोई हमसे प्रेम नहीं करता तब हो सकता है कि उसने हमें अपनी गोद में उठाया हो। जब हमें लगता है कि हमें कभी माफ़ नहीं किया जा सकता, शायद वह हमें पहले ही क्षमा कर चुका हो और सिर्फ़ इस बात के इंतज़ार में हो कि हम अपनी ख़ुदी को भूल जाएँ और आत्मग्लानि की भावना से मुक्त हो जाएँ। जब हमें लगता है कि हमारे मन में संदेह हैं तब हो सकता है कि वह हमारे विश्वास को और दृढ़ कर रहा हो। ऐसा है उसके प्रेम का जादू जिससे वह हमारी सँभाल करता है और इसी प्रेम का ताना-बाना वह हमारे चारों ओर बुनता है। मगर चूँकि उसने ख़ुद हमें स्वतंत्र-इच्छा और जुदाई के भ्रम में डाला है, इसलिए वह हमारे साथ एक खेल खेलता है ताकि हम धीरे-धीरे स्वयं इस पहेली को सुलझाएँ। वह परम सत्ता जिसने समय को बनाया है वह ख़ुद समय के दायरे से परे है। और अंत में, हमें पता चलता है कि हमारा कभी कोई अलग अस्तित्व था ही नहीं, बल्कि हम हमेशा उसके प्रेम की पनाहगाह में ही रहे हैं। इस प्रकार हम रूहानी तौर पर विकसित होते हैं। और जैसे-जैसे हमारी चेतना का विस्तार होता है, जैसे-जैसे हमारा छोटा-सा अस्तित्व उस परम सत्ता में विलीन होता है, वैसे-वैसे हम उस अवस्था के और निकट आ जाते हैं जिसे आम तौर पर निर्वाण, आत्मज्ञान, परमात्मा का साक्षात्कार, परमात्मा से मिलाप, प्यार के सागर में समाना कहा गया है। और जब हम अपने अंदर उसका अनुभव कर लेते हैं तब वह हमें सर्वत्र दिखाई देता है। तब हमें समझ आता है कि प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक स्थान पवित्र-पावन है।

वन बीइंग वन

मनुष्य-जन्म—एक उपहार

हम शरीर नहीं हैं। न ही हम विचार, कर्म और भावनाएँ हैं। हमारी असली पहचान हमारी आत्मा है। संत-महात्मा समझाते हैं कि परमात्मा रूपी समुद्र की बूँद होने के कारण आत्मा के अंदर उस परमपिता परमात्मा जैसे गुण मौजूद हैं। सतगुरु हमें समझाते हैं कि यह नाशवान दुनिया आत्मा का असली घर नहीं है। इसका निज-घर शाश्वत सत्य और आनंद का धाम है।

इस शरीर के ज़रिए हमारा संबंध मन व इंद्रियों के साथ जुड़ गया। इंद्रियों के भोगों ने मन को भटका दिया जिसके फलस्वरूप, धीरे-धीरे आत्मा का प्रकाश धुँधला पड़ गया। आत्मा शरीर के बंधनों में बँध गई और जन्म-दर-जन्म इस रचना के साथ मज़बूती से बँधती चली गई। इसके फलस्वरूप, आत्मा अपने निर्मल स्वरूप और असल मक़सद को भूल गई।

संत-महात्मा समझाते हैं कि हमें इस सृष्टि में सदा रहने के लिए नहीं भेजा गया था। हमारा मक़सद वापस अपने मूल स्त्रोत में समाकर अपने रचयिता से मिलाप करना था। मनुष्य-जन्म रूपी यह उपहार प्राप्त होने से पहले हमें इस दुनिया में बहुत-सी अलग-अलग योनियों में जन्म लेना और मरना पड़ा है। यह मनुष्य-शरीर इतना मूल्यवान इसलिए है क्योंकि सिर्फ़ इस देह को पाकर ही परमात्मा के पास वापस लौटा जा सकता है।

जब हमारी आत्मा पहली बार नीचे इस दुनिया में उतरी तब से मन सदा इसके साथ रहा है। मन इंद्रियों के अधीन है और इंद्रियाँ हमारी इच्छाओं के। जो भी चीज़ मन को पहली चीज़ों से बेहतर लगती है, यह उसे प्राप्त करने के लिए निरंतर कोशिश करता रहता है: और अधिक धन-दौलत, और ऊँचा रुतबा, और अधिक ताक़त और ज़्यादा भौतिक सुख-सुविधाएँ इत्यादि ताकि इसे ख़ुशी मिल सके। मन के प्रभाव में आकर हम परमात्मा से और ज़्यादा दूर होते चले गए। मगर हमारी आत्मा बेचैन हो गई और हम आत्मिक सुख व परमात्मा के प्रेम के लिए तड़पने लग गए। संत-सतगुरु

हमें समझाते हैं कि मन हमारा सबसे ख़तरनाक दुश्मन है, परंतु अगर इसे क़ाबू में कर लिया जाए तो यह उत्तम सेवक भी बन सकता है।

युगों-युगों से, संत-महात्मा हमें समझाते आए हैं कि परमात्मा हमारे शरीर में ही निवास करता है। हमें उसकी खोज में बाहर भटकने की ज़रूरत नहीं है। हमें जिस चीज़ की तलाश है, वह पहले से ही हमारे अंदर है। इसलिए हमें समझाया जाता है कि अपने ध्यान को अंतर्मुख करें और अपने विचारों को उस परमात्मा की ओर मोड़ें। वहाँ पहुँचकर हमें शांति और संतोष प्राप्त होगा, जिसके लिए हमारी आत्मा तड़पती है।

मनुष्य-जन्म का मिल जाना निज-घर वापसी के सफ़र का पहला क़दम है। अपने जीवन के उद्देश्य और अपने असल स्वरूप के बारे में याद दिलाए जाना अगला क़दम है।

सर्वज्ञाता परमात्मा यह जानता है कि इस कार्य को अपने दम पर पूरा कर पाना मनुष्य के बस की बात नहीं है। इसलिए उसे हम पर दया आई और उसने हमें अज्ञानता की गहरी नींद से जगाने के लिए संत-महात्माओं को इस दुनिया में भेज दिया।

मनुष्य-जन्म रूपी इस उपहार की अहमियत, अपने असल स्वरूप का ज्ञान और हमारे जीवन के उद्देश्य के बारे में पूरी समझ तब आती है जब हम अपने वक़्त के पूर्ण सतगुरु की शरण में आते हैं। वह हमें समझाते हैं कि हम शरीर नहीं हैं, हम निर्मल आत्मा हैं जो पूरी तरह मन और इंद्रियों के अधीन है। जैसे ही हम अपने सतगुरु के उपदेश पर अमल करना शुरू कर देते हैं हमें एहसास होने लगता है कि इस मनुष्य-जीवन का सच्चा उद्देश्य अपनी आत्मा को वापस परमात्मा में अभेद करना है। सतगुरु के मार्गदर्शन द्वारा हम इस क़ीमती ख़ज़ाने को प्राप्त करने का भेद जान जाते हैं।

जो सच्चे दिल से सत्य की खोज करते हैं, सतगुरु उन्हें जीवन का सबसे क़ीमती ख़ज़ाना—नाम रूपी दात बख़्श देते हैं। अलग-अलग समय पर, अलग-अलग धर्मों व देशों में हुए संत-महात्मा इसी एक सत्य को समझाने

के लिए इस सृष्टि में आए हैं कि 'नाम' जो स्वयं परमात्मा की रचनात्मक शक्ति है जिसके ज़रिए इस संपूर्ण सृष्टि का सृजन हुआ है और जिसके आधार पर यह सृष्टि क़ायम है, वह शक्ति कहीं बाहर नहीं, हमारे अंदर ही है। नामदान के वक़्त भजन-सिमरन करने का जो तरीक़ा हमें बताया जाता है उसे 'सुरत-शब्द योग' कहा जाता है। इसके अभ्यास द्वारा हम अपनी सुरत को शब्द में लीन कर देते हैं और इसकी शक्ति द्वारा हमारी सुरत ऊपर की ओर चढ़ाई करती हुई सूक्ष्म रूहानी मंडलों में से होती हुई परमपिता परमात्मा के पास पहुँच जाती है।

यह अपनी पहचान और फिर परमात्मा की पहचान का मार्ग है। यह मार्ग सरल लगता है, मगर इस पर चलना इतना आसान नहीं है, इसलिए संत-महात्मा नामदान के बाद भी निरंतर हमारा मार्गदर्शन व हमारी सँभाल करते हैं। वह हमें हमारी अंतिम मंज़िल तक पहुँचाने की ज़िम्मेदारी लेते हैं। परमात्मा से मिलाप के बाद हमें वह अमूल्य दौलत प्राप्त हो जाती है जिसकी तुलना में बेशक़ीमती रत्न भी फीके लगने लगते हैं। प्यार व भक्ति के ज़रिए हम परमात्मा के दिव्य प्रकाश का अनुभव कर सकते हैं।

सुरत-शब्द योग का अभ्यास—परमात्मा के नाम पर ध्यान एकाग्र करना—हमारी आत्मा को परमात्मा के साथ मिला देता है, इस अभ्यास द्वारा हमारे अंदर परमात्मा के लिए सच्चा प्यार जागृत हो जाता है। यह 'नाम' यानी शब्द ही संपूर्ण ब्रह्मांड की सँभाल करता है और यही परमात्मा की सृजनात्मक शक्ति का साकार रूप है। परमात्मा का पैग़ाम हम तक पहुँचाने वाले सच्चे संत देहधारी 'नाम' होते हैं। परमात्मा का साक्षात्कार कर लेने के कारण वह उस ख़ास मुक़ाम पर पहुँच चुके होते हैं जहाँ उन्हें परमात्मा से मिलाप की युक्ति का ज्ञान हो जाता है और वह अपने शिष्यों को भी इस युक्ति का भेद समझा सकते हैं।

सतगुरु की शरण लेना और उनके द्वारा सिखाई गई युक्ति के अनुसार भजन-सिमरन करना ही आवागमन के चक्र से मुक्त होने का एकमात्र रास्ता है।

अपनी सुरत को अंदर शब्द के साथ जोड़कर, धीरे–धीरे हमारे सभी कर्मों का नाश हो जाता है। जब सभी कर्म नाश हो जाते हैं, तभी आत्मा निर्मल रूहानी मंडलों में दाख़िल हो सकती है। जब आत्मा परमात्मा में समा जाती है तब हमारा आंतरिक सफ़र समाप्त हो जाता है।

नामदान के समय सतगुरु द्वारा सिखाई गई भजन–सिमरन के अभ्यास की युक्ति समझने में तो आसान है लेकिन उस पर अमल करना मुश्किल है। इस सफ़र के पहले पड़ाव पर हम 'तीसरे तिल' पर पहुँच जाते हैं जो हमारी इन दो स्थूल आँखों के पीछे व ऊपर है। दूसरा पड़ाव तीसरे तिल से शुरू होकर सबसे ऊँचे रूहानी मंडल तक है। तीसरी आँख के खुलने पर ही दूसरा पड़ाव शुरू होता है।

शरीर के नौ द्वारों के ज़रिए हमारा ध्यान हमेशा दुनिया में फैला रहता है। मन एकाग्रता को प्राप्त करने की हमारी बहुत–सी कोशिशों को नाक़ाम कर देता है। हर समय सांसारिक शक्लों–पदार्थों का सिमरन करते रहना मन की क़ुदरती आदत है। संत–महात्मा हमें मन की इसी आदत का लाभ उठाकर इसे दुनिया के सिमरन की बजाय परमात्मा के सिमरन में लगाने का सुझाव देते हैं। जब हम कोई ऐसा कार्य कर रहे हों जिसमें हमारी पूरी तवज्जोह की ज़रूरत नहीं पड़ती तब हम मन को सिमरन में लगाकर इसे भजन–सिमरन के लिए तैयार कर सकते हैं।

लगातार सिमरन करते रहने से हम रूहानी ऊर्जा से भरपूर रहते हैं जिससे भजन–सिमरन के समय तीसरे तिल पर ध्यान को एकाग्र करना आसान हो जाता है। 'ध्यान' सतगुरु द्वारा दी गई दात है जो वह हमें सही समय आने पर देंगे। भजन के दौरान हम शब्द–धुन को सुनने की कोशिश करते हैं जो हमारे अंदर निरंतर गूँज रही है। एक बार शब्द से जुड़ जाने के बाद हम 'प्रकाश व शब्द–धुन' के आनंद में लीन होकर अपने सतगुरु के साथ अंदर अद्‌भुत रूहानी मंडलों को पार करते जाते हैं जब तक कि हम परमपिता परमात्मा के चरणों में नहीं पहुँच जाते।

आज के समय में तनावपूर्ण और व्यस्त दिनचर्या के कारण हमारा इस दुनिया रूपी दलदल में फँसकर रह जाना स्वाभाविक है। हममें से जिन जीवों को देहधारी सतगुरु की संगति का सौभाग्य प्राप्त है, उन्हें इन उपहारों की क़द्र करनी चाहिए। मनुष्य-जन्म और नामदान—ये दोनों उपहार हमें परम सत्य और हमारे जीवन के उद्देश्य के प्रति सचेत करते हैं। हम इस दुनिया में रहते हुए इससे बेलाग होकर जीवन व्यतीत कर सकते हैं और भ्रम के दायरे से ऊपर उठकर अपने भीतर छिपे ख़ज़ाने को प्राप्त कर सकते हैं।

कर्म-प्रधान संसार

जब हम भीड़ में खड़े होकर दुनिया को देखते हैं तब हमें क्या दिखाई देता है—क्या हम सिर्फ़ लोगों को ज़िंदगी का आनंद लेते और अपने कार्यों में व्यस्त देखते हैं? दरअसल, हम जो देखते हैं, वह कर्मों के सागर में उठते-गिरते ज्वार-भाटे और लहरें हैं, जो हमारे सामने जीवंत दृश्य के रूप में प्रकट होती हैं। और यह सिर्फ़ सीमित दायरे में ही सच नहीं है—यह संसार में घट रही हर घटना के पीछे की सच्चाई है।

जब हम इसका विश्लेषण करते हैं तब हमें एहसास होता है कि हम जो भी देख रहे हैं, वह जीवों द्वारा अतीत में किए गए कर्मों का फल है जो उन्हें वर्तमान में प्राप्त हो रहा है। इस भौतिक जगत को स्वर्ग बनाने के उद्देश्य से नहीं रचा गया। असल में, हम ख़ुद को एक अंधकारपूर्ण और भयानक सागर में पाते हैं, जहाँ हमें अपने प्रारब्ध के अनुसार उतार-चढ़ाव में से गुज़रना पड़ता है। इस संदर्भ में, इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है जब स्वामी जी महाराज ने इस संसार के बारे में यह फ़रमाया:

जग में घोर अंधेरा भारी। तन में तम का भंडारा॥

सारबचन संग्रह

यह समझना मुश्किल नहीं है कि आपने संसार को इस रूप में बयान क्यों किया है। हम जानते हैं कि संसार में सभी जीवों पर इंद्रियों के भोगों, सत्ता और उच्च पदों व हर प्रकार की संपदा को पाने का जुनून सवार है। लोग अपनी निजी इच्छाओं की पूर्ति के लिए हर तरह के ग़लत कर्म करते हैं। देश अपने निजी हितों के लिए युद्ध करते हैं। आज भी ऐसे राष्ट्र और लोग हैं जो घातक संघर्ष में उलझे हुए हैं। हैरानी होती है कि क्या कभी ऐसा समय भी था जब संसार में शांति और सद्भाव रहा हो?

यदि हम अपने सतगुरु के मार्गदर्शन द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर स्थिति का विश्लेषण करें तो हम स्पष्ट देख सकते हैं कि इस दु:खद स्थिति की

सारी वजह अहंकार और निजी स्वार्थों की पूर्ति है। लोग इस ग़लतफ़हमी का शिकार होकर अपनी इच्छाओं को पूरा करने की कोशिश करते हैं कि इससे उन्हें ख़ुशी प्राप्त होगी। लेकिन वे कभी भी इस बात पर विचार नहीं करते कि इन कर्मों का क्या परिणाम होगा। वे कर्म करते जाते हैं, उन्हें लगता है कि उन्हें इन कर्मों का कोई परिणाम नहीं भुगतना पड़ेगा, मगर हम सब जानते हैं कि ऐसा कोई कर्म नहीं है जिसका कोई परिणाम न हो। इस संसार में बिना क़ीमत चुकाए कुछ भी नहीं मिलता।

कर्म के बाद परिणाम का अर्थ है कि हर बार जब हम कोई नया कर्म करते हैं तब हम उसके परिणाम से बँध जाते हैं जो बाद में मिलता है। ये परिणाम समय आने पर मिलते हैं और इस बात को समझ लेना चाहिए कि ये ज़रूरी नहीं कि कर्म करने के तुरंत बाद ही परिणाम सामने आ जाए—इसमें वर्ष, दशक, यहाँ तक कि कई जन्म भी लग सकते हैं। यह मुमकिन नहीं है कि हम इस जन्म में किए गए सभी कर्मों का हिसाब इसी जन्म में चुका पाएँ, पिछले जन्मों में किए गए कर्मों की तो बात ही छोड़ देनी चाहिए।

इसके अलावा, जिन हालात में से हम गुज़र रहे हैं, उनका आधार हमारा प्रारब्ध है। अगर हम सांसारिक सुखों के पीछे भागते रहेंगे और दिन-ब-दिन अतिरिक्त कर्मों का बोझ उठाते रहेंगे तो हम भूलभुलैया में फँसे चूहों से बेहतर कैसे हो सकते हैं, जो पनीर के टुकड़े को पाने की चाह में भाग रहे हैं? जब तक इस भूलभुलैया से बाहर निकल चुका कोई व्यक्ति हमारी मदद और हमारा मार्गदर्शन न करे, हम इस भुलभूलैया से बाहर निकलने की उम्मीद कैसे रख सकते हैं?

संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि आत्मा को चौरासी लाख अगल-अलग योनियों में से किसी भी योनि में जन्म मिल सकता है। इसलिए मनुष्य के रूप में जन्म लेना एक दुर्लभ और अनमोल अवसर है। यह ख़ास तौर पर इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि केवल मनुष्य-जन्म में ही हम मुक्ति प्राप्त करने की आशा रख सकते हैं। चूँकि हम इस भरोसे नहीं बैठ सकते कि हमें

हर बार यह अवसर प्राप्त हो जाएगा, इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि हम मनुष्य-जन्म के रूप में मिले इस अद्‌भुत अवसर की अहमियत को पहचानें।

जो कुछ हम हमेशा से करते आए हैं, वही सब करते हुए इस क़ीमती अवसर को गँवा देना बहुत बड़ी मूर्खता होगी। हम सृष्टि के आरंभ से ही मन और माया के बंधनों में जकड़े हुए हैं परंतु अब हमें मौक़ा मिला है जिसमें हम सर्वोच्च मुक्ति के लिए कोशिश कर सकते हैं।

चूँकि हमें मनुष्य-जन्म की दात प्राप्त हो गई है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि हमने इस संसार में आवागमन के चक्र से मुक्ति पाने की पहली रुकावट को पार कर लिया है। लेकिन अगर हम वही सब करते रहेंगे जो हम हमेशा से करते आए हैं तो हमारे दु:खों का वह सिलसिला जारी रहेगा जिससे हम छुटकारा पाना चाहते हैं। फिर हम मन और इंद्रियों के चंगुल से कैसे बच पाएँगे जिन्होंने हमें अब तक बंदी बनाकर रखा है?

पूर्ण संत-महात्मा हमें माया की इस भूलभुलैया से निकालने के उद्‌देश्य से ही इस संसार में आए हैं। वे हमारे अनेक प्रश्नों के उत्तर लेकर और हमें मुश्किल हालात से बाहर निकालने के लिए आते हैं।

सतगुरु हमें समझाते हैं कि हम किस तरह इस संसार रूपी बंदीख़ाने में दु:खों से घिरे हुए हैं और मन ने किस तरह लगातार दुनिया में उलझाकर हमें हमारी असलियत ही भुला दी है कि हम असल में उस रचयिता की अमर-अविनाशी संतान हैं।

हमारी सच्ची विरासत स्वयं वह परमात्मा है, फिर भी हम संसार के क्षणभंगुर आकर्षणों की दलदल में फँसे रहते हैं। सतगुरु के अमूल्य उपदेश को समझने और उस पर अमल करने में हम बहुत लापरवाही करते हैं। वह समझाते हैं कि सिर्फ़ भजन-सिमरन द्वारा मन को स्थिर करके इसे तीसरे तिल पर ले जाकर ही हम इस संसार के बंधनों से आज़ाद हो सकते हैं। मन और माया के चंगुल से मुक्त होने का एकमात्र तरीक़ा अपने शरीर के अंदर दाख़िल होकर नाम से जुड़ना है। आख़िरकार यही हमें हमारे सच्चे घर और परमपिता परमात्मा के पास वापस ले जाएगा।

यह नाम परमात्मा की सर्वव्यापक शक्ति है जिसके ज़रिए उसने सब कुछ रचा है और जिसके ज़रिए वह अब भी इसकी सँभाल कर रहा है। इस शक्ति के अनेक नाम हैं—वर्ड, लॉगॉस, शब्द, कलमा, ताओ इत्यादि। लेकिन वह बुनियादी सच एक ही है: हम सभी के भीतर वह दिव्य धारा जिससे कोई भी जीव जुड़ सकता है जो अपने परमपिता परमात्मा के धाम वापस लौटना चाहता है। इसे पूर्ण देहधारी सतगुरु द्वारा समझाई गई युक्ति पर अमल करके हासिल किया जा सकता है।

इसके लिए कुछ विशेष शर्तों का पालन करना ज़रूरी है वरना हमारी कोशिशें व्यर्थ सिद्ध होती हैं। सबसे पहले हमें शाकाहारी भोजन को अपनाना होगा। हमें सचेत होकर ऐसे भोजन का चुनाव करना है जिससे कम कर्म इकट्ठे हों ताकि हमारे कर्मों का बोझ कम से कम रहे।

दूसरा, हमें उन पदार्थों से परहेज़ करना चाहिए जिनसे हमारा मन फैलता है। इनमें शराब, मादक पदार्थ और तंबाकू इत्यादि शामिल हैं। चूँकि रूहानी अभ्यास का उद्देश्य मन को एकाग्र और स्थिर करना है, इसलिए स्पष्ट है कि इन पदार्थों का सेवन हानिकारक सिद्ध होगा और हमारे जीवन के मुख्य उद्देश्य के अनुकूल नहीं होगा।

तीसरा, हमें नैतिक जीवन व्यतीत करना चाहिए जैसा कि बहुत-से धर्मों और ईसाई धर्म के दस आदेशों में भी समझाया गया है। आख़िरी शर्त यह है कि हमें भजन-सिमरन करना चाहिए, जो हमें हमारी रूहानी विरासत की ओर लेकर जाता है।

सिर्फ़ अपने सतगुरु के हुक्म का पालन करके ही हम आंतरिक सूक्ष्म मंडलों में चढ़ाई कर सकते हैं। इससे हम उस दिव्य शब्द से जुड़ पाएँगे जो हमें हमारे कर्म के ऋण से मुक्त करेगा, हमारी आत्मा से मन और माया के पर्दों को हटा देगा और हमें परमात्मा की हुज़ूरी में पहुँचने के लायक़ बनाएगा।

हमें यह मान लेना चाहिए कि हम सचमुच असहाय और अज्ञानी हैं। हमारा एकमात्र सहारा हमारे सतगुरु ही हैं और उनके मार्गदर्शन में रहते हुए

उनके उपदेश पर अमल करना ही सबसे बड़ी समझदारी है। इसी से हमें सफलता मिलेगी।

हमारे जीवन में इतनी ज़्यादा समस्याओं के पैदा होने की एक ही वजह है, वह है हमारा 'अहंकार'। हमें अपने अहंकार को एक तरफ़ रखकर सतगुरु द्वारा दिखाए मार्ग पर चलने की आदत डालनी चाहिए और अपना पूरा ध्यान उस रूहानी अभ्यास में लगाना चाहिए जिसकी युक्ति उन्होंने हमें समझाई है।

अब हमें देर नहीं करनी चाहिए। समय किसी के लिए नहीं रुकता- यह जीवन भी सदा क़ायम नहीं रहता। हमारे पारिवारिक सदस्यों और उन मित्रों की सूची लंबी होती जा रही है जो हमारा साथ छोड़कर इस दुनिया से जा चुके हैं और निश्चय ही हमारा समय भी नज़दीक आ रहा है। यही करनी करने का समय है। टालमटोल करना हमारे हित में नहीं है।

हमारा हर दिन भजन-सिमरन से शुरू होना चाहिए और सतगुरु की मौजूदगी का एहसास निरंतर बना रहना चाहिए। सिमरन करके हम सतगुरु को अपने नज़दीक ला सकते हैं और जब भी हमारे पास थोड़ा-सा ख़ाली समय हो, हम बैठकर, चाहे कुछ मिनटों के लिए ही सही, एकाग्रचित्त होकर सिमरन और भजन की कोशिश कर सकते हैं।

उनकी मौजूदगी के निरंतर एहसास से हमारी तरक़्क़ी तेज़ी से होगी और हम पाएँगे कि हमारा दैनिक जीवन भक्ति और दया-मेहर के रंग में रँग गया है।

तू नहिं जाने भेद। भर्म जाल में फँस रहा॥
या ते कर विश्वास। गुरु बिन और न दूसरा॥
गुरु का घाट निहार। सुरत बाँध निज शब्द में॥
शब्द बिना कोइ नाहिं। जो काढ़े इस फंद से॥
ता ते शब्द किवाड़। खोलो गुरु कुँजी पकड़॥

स्वामी जी

मृत्यु सिर पर मंडरा रही है

हम मृत्यु के बारे में क्या सोचते हैं? हम इसे एक मित्र के रूप में देखते हैं या एक शत्रु के रूप में या हम इसे मुक्ति के रूप में देखते हैं? हम इसे अंत के रूप में देखते हैं या एक नई शुरुआत के रूप में? इसमें कोई संदेह नहीं कि एक न एक दिन हमारी मृत्यु ज़रूर होगी—शायद चौबीस घंटे में या चौबीस साल में। किसी भी हाल में, हमारी मृत्यु अटल है।

हमारे समाज में मृत्यु के बारे में बात करना अच्छा नहीं समझा जाता। लोग इसे भयानक समझते हैं और सोचते हैं कि जो इसके बारे में बात करता है वह मरना चाहता है या मानसिक तौर पर रोगी है। असल में मृत्यु उन्हें उस सत्य की याद दिलाती है जिसे वे याद नहीं करना चाहते। कितनी अजीब बात है क्योंकि जब हम टेलीविज़न देखते हैं, हम लोगों को मरते देखते हैं और जब हम समाचार-पत्र पढ़ते हैं तब भी हम मृत्यु के बारे में ही पढ़ रहे होते हैं। अपहरण के दौरान गोली लगने से कोई नन्हीं-सी बच्ची मारी गई, भूकंपों, विमान दुर्घटनाओं, ज्वार-भाटे में सैकड़ों लोग मारे गए। हमें बार-बार मृत्यु के बारे में याद करवाया जाता है। लेकिन किसी तरह, हम अपने चारों ओर महीन-सा अभेद्य कोकून बुन लेते हैं और सोचते हैं कि ऐसा हमारे साथ नहीं होगा।

फिर भी, अगर यह संसार और इसका मोह-जाल हमारा लक्ष्य नहीं है, यदि हमारा लक्ष्य ईश्वर-प्राप्ति, मुक्ति या आत्मज्ञान है तो हमें मृत्यु के बारे में सोचना चाहिए। हमें ख़ुद से दो सवाल पूछने चाहिएँ: क्या मुझे यह याद रहता है कि मैं हर पल मौत के नज़दीक जा रहा हूँ तथा यह भी कि हर कोई व हर वस्तु धीरे-धीरे ख़त्म हो रही है, इसलिए मुझे सभी जीवों के साथ दया-भाव से पेश आना चाहिए? क्या मैं मृत्यु की सच्चाई को इतनी अच्छी तरह से समझ गया हूँ कि मैं अपना हर पल आत्म-ज्ञान की प्राप्ति में लगा रहा हूँ? अगर इन सवालों का जवाब हाँ में है तो हम जीते-जी मरना सीख रहे हैं—हम जागरूक हो रहे हैं।

जिस संसार में हम रहते हैं, वह केवल एक भ्रम है। फिर भी हमारा मन इतना भ्रमित है कि हमें लगता है कि यह सब सत्य और चिरस्थायी है। इस जीवन और केवल इसी जीवन पर अपना ध्यान केंद्रित रखना सबसे बड़ा धोखा है। और असल में, मन का उद्देश्य ही हमें धोखा देना है। हमारा ध्यान जितना अधिक फैलता है, अपने ध्यान को केंद्रित करना और हक़ीक़त के प्रति जागरूक होना उतना ही मुश्किल हो जाता है।

जागरूकता का पहला क़दम यह जान लेना है कि हम हक़ीक़त से कितना दूर हो चुके हैं और फिर इस बारे में कुछ करने का फ़ैसला लेना है। ऐसा लगता है कि हमारी ज़िंदगी अपनी अजीब-सी चाल से चल रही है। ऐसा इसलिए लगता है क्योंकि हमने अपने जीवन की बागडोर मन को सौंप दी है। स्वामी जी महाराज फ़रमाते हैं:

देखो न्याव कर मन में अपने।
बुधि से जग को कहते सुपने॥
मन तरंग में छिन छिन बहते।
तब जग को जागृत सम कहते॥

राधा स्वामी टीचिंग्स

स्वामी जी महाराज यह नहीं फ़रमा रहे हैं कि हमें बुद्धि का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। इस संसार में रहते हुए बुद्धि का इस्तेमाल ज़रूर करना चाहिए। सबसे पहले, हमें बौद्धिक स्तर पर यह समझना होगा कि यह संसार मिथ्या है लेकिन फिर हमें यह भी समझना चाहिए कि बुद्धि द्वारा इस बात को जान लेने का कोई महत्त्व नहीं है। बुद्धि केवल उस दिशा की ओर संकेत कर सकती है जिस दिशा में जाने की ज़रूरत है। लेकिन यह हमें वहाँ पहुँचा नहीं सकती! वहाँ पहुँचने के लिए, हमें अपने सतगुरु की दया-मेहर की ज़रूरत है।

युगों-युगों से बहुत-से आलिम-फ़ाज़िल मन द्वारा धोखा खा चुके हैं, मगर हम कितने भाग्यशाली हैं कि हमें मन के दायरे से परे देख पाने का

मौक़ा मिला है। बदक़िस्मती से सतगुरु के होने के बावजूद हम माया के इस भ्रम में फँस जाते हैं और कभी-कभी खोया और उलझा हुआ महसूस करते हैं। ऐसा लगता है कि हमारी कोई तरक़्क़ी नहीं हो रही है और मानो सतगुरु ने भी हमें बेसहारा छोड़ दिया है।

जब ऐसा होता है तब इसका मतलब यह नहीं है कि सतगुरु हमें छोड़कर चले गए हैं या उन्होंने हमारी आत्मा को बेसहारा छोड़ दिया है क्योंकि वह देहस्वरूप में मौजूद नहीं हैं। सतगुरु कहीं और नहीं बल्कि यहीं हैं, हमारे अंदर और हर उस चीज़ में जिसे हम देखते या छूते हैं। लेकिन हमारा ध्यान भटक जाता है, हम यह भूल जाते हैं कि हम कौन हैं और क्या हैं और किस दिशा में जा रहे हैं।

यह किसी फिल्म को देखने जैसा है। जब आप फिल्म देखने के लिए बैठ जाते हैं तब आप अपने आस-पास के लोगों, पॉपकॉर्न की ख़ुशबू और जिस कुर्सी पर आप बैठे हैं, उन सभी चीज़ों के बारे में सचेत होते हैं। लेकिन जब फिल्म शुरू हो जाती है तब आप कहानी में खो जाते हैं। वह फिल्म ही आपको वास्तविक लगने लगती है।

क्या इस दुनिया में हमारे साथ बिलकुल ऐसा ही नहीं होता? बौद्धिक स्तर पर हम जानते हैं कि यह एक भ्रम है: एक नाटक, जैसा कि सतगुरु अक़सर समझाते हैं। लेकिन जन्म-दर-जन्म, हम इस नाटक में और भी ज़्यादा मस्त हो गए हैं। हमें यह संसार रूपी नाटक ही वास्तविक लगता है, इसी तरह हमारा बहुत-सा समय लेने वाली नौकरियाँ और हमारे बेहद गहरे रिश्ते, हमारे बच्चे, हमारे दोस्त, हमारे घर या हमारी कमियाँ इत्यादि हमारे लिए वास्तविक बन गए हैं। हम परम सत्य के प्रति अचेत हो गए हैं।

माया का यह भ्रम इतना व्यापक है कि आत्मा रोते हुए पुकार उठती है, स्वामी जी महाराज के वचन हैं:

भरोसा दम का है नहिं भाई। मर्म मैं अब तक कुछ नहिं पाई॥
करूँ क्या... मरूँ क्या अब मैं माहुर खाई॥

गुरू तब बचन सुनाया सार। मरे मत बौरी धीरज धार॥
नाम रट मन से बारम्बार। रूप गुरु धारो हिये मँझार॥

सारबचन संग्रह

सभी संत–महात्मा समझाते हैं कि हमें भजन–सिमरन करते रहना चाहिए और हर समय अपना ध्यान सतगुरु की ओर रखना चाहिए। अगर हम ऐसा करते हैं तो हम चेतनता और 'जीते–जी मरने' का अभ्यास कर रहे होते हैं। यह फैले हुए मन को वापस उसके ठिकाने पर लाने जैसा है। भजन–सिमरन, जीते–जी मरने का यह अभ्यास, कुछ ऐसा नहीं है जिसमें हम ज़बरदस्ती सफलता प्राप्त कर सकते हैं जैसा कि हम अपने जीवन में बहुत–सी चीज़ों में करते हैं। इसके लिए अलग नज़रिया अपनाना पड़ता है। अपने दैनिक जीवन में हम संघर्ष करते हैं जबकि भजन–सिमरन में हमें छोड़ना पड़ता है।

क्या सतगुरु हमें बार–बार यही नहीं समझाते हैं? सिर्फ़ अपना भजन–सिमरन करो। बाक़ी सब सतगुरु पर छोड़ दो। सब छोड़ दो, सब उन्हें करने दो। कुछ भी हासिल करने की कोशिश मत करो। भजन–सिमरन में हम जिसे 'सफलता' कहते हैं, वह हमारे हाथ में नहीं है। जो कुछ भी होता है, उनके हुक्म से होता है। सिर्फ़ स्थिर रहने की कोशिश करें। बैठे रहें। जितना ज़्यादा हम संघर्ष करते हैं, उतनी ही ज़्यादा बाधाएँ हमारे रास्ते में आती हैं तथा मार्ग मुश्किल और नीरस बन जाता है।

हमारी पहली ग़लत धारणा यह है कि हम जल्दी से जल्दी 'नतीजा' चाहते हैं। इससे सिर्फ़ निराशा ही मिलेगी। बेशक इसका मतलब यह नहीं कि हम भजन–सिमरन करना छोड़ दें। इसका अर्थ भजन–सिमरन को सिर्फ़ नए नज़रिए से करना है। निस्संदेह हमें सतगुरु पर पूरा भरोसा रखना चाहिए और हमें उनकी इस बात पर भी विश्वास करना चाहिए कि अगर हम सिर्फ़ भजन–सिमरन करते जाएँ तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।

हमें लगता है कि जब हम भजन–सिमरन के लिए बैठ जाते हैं, यह तब शुरू होता है, मगर ऐसा नहीं है। भजन–सिमरन का कोई आरंभ या अंत नहीं होता—यह लगातार चलता रहना चाहिए। असल में यह इसके बारे में

सोचने-भर से ही शुरू हो जाता है। यह जागरूकता की शुरुआत है। यह मन को ग्रहण करने के लायक़ बनाना है। जागरूकता का अभ्यास हर समय किया जा सकता है, यहाँ तक कि जब हम बहुत व्यस्त हों तब भी। इसके लिए शांति का सिर्फ़ एक पल ही बहुत है जब हमें सतगुरु की याद आए और फिर ऐसा लगेगा जैसे हमने भजन-सिमरन करना कभी छोड़ा ही नहीं था और यह अभ्यास निरंतर चलता रहेगा।

जब हम सब कुछ उस पर छोड़ देते हैं, जब हम सोचना बंद कर देते हैं, जब मन अचानक विचारों से ख़ाली हो जाता है तब सतगुरु वहाँ मौजूद होते हैं। वह हमेशा वहीं मौजूद थे लेकिन उस पल हम उन्हें याद करते हैं। ऐसे पल विरले होते हैं और इसलिए हमें इनकी ख़ातिर पल-भर के लिए अपने विचारों के सिलसिले को तोड़ने की कोशिश करनी चाहिए। धीरे-धीरे ये पल बढ़ते जाएँगे जब तक कि ये सतगुरु की यादों का सिलसिला नहीं बन जाते। फिर सतगुरु हमारी हर सोच, हर करनी में होंगे।

यह सब तो सिर्फ़ नींव बनाने जैसा है। असल में हम अभी तक भजन-सिमरन के लिए बैठे ही नहीं हैं। इसके बाद जब हम भजन-सिमरन के लिए बैठते हैं तब हमें फिर से ऐसी ही प्रक्रिया से गुज़रना पड़ सकता है।

भजन-सिमरन की शुरुआत स्पष्ट सोच के साथ करनी चाहिए, जिसका मतलब है कि सबसे पहले हमें सचमुच अच्छी तरह से जागना है। पूरी तरह से जागने के लिए समय लें। हमें सिमरन शुरू करने की इतनी जल्दी क्यों होती है? अगर हम उठते ही सिमरन शुरू कर दें तो क्या हम जल्दी किसी मुक़ाम पर पहुँच जाएँगे? अगर हम जल्दबाज़ी करते हैं तो हम फिर से सो सकते हैं या भजन-सिमरन से ही उठ जाते हैं।

भजन-सिमरन की शुरुआत सही सोच के साथ करें। बस शांति से बैठ जाएँ और सतगुरु के बारे में सोचें। महसूस करें कि वह वहीं पर हैं। चाहे इसमें कितना भी समय क्यों न लगे। इस अवस्था में सतगुरु को अपने अंग-संग महसूस करना ही भजन-सिमरन है। इससे शांतिमय माहौल बनता है।

अब हम सिमरन शुरू कर सकते हैं। फिर यह सहज भाव से होने लगेगा। लेकिन सतगुरु के मौजूद होने के एहसास को बनाए रखें। सजग रहें।

सिमरन की शक्ति इस बात में है कि ये पवित्र लफ़्ज़ हमें सतगुरु द्वारा बताए गए हैं। इसका अर्थ यह है कि हम जो लफ़्ज़ दोहराते हैं, वे सिर्फ़ लफ़्ज़ नहीं हैं। इनमें सतगुरु की शक्ति समाई हुई है। इसलिए जब हम इन्हें दोहराएँ तब हम इनकी अहमियत को समझें और इनकी क़द्र करें। इनसे हमें अपने सतगुरु की याद आनी चाहिए।

जैसे ही हम शांतिमय माहौल बनाकर सिमरन करना शुरू कर देते हैं, वैसे ही एक पल ऐसा आएगा जब हमें सहज रूप से शब्द-धुन सुनाई देने लग जाएगी। उस समय सिमरन और बाक़ी सब कुछ पीछे रह जाता है। सिर्फ़ शब्द-धुन ही सुनाई देती है। और यहीं पर हम सच में सब कुछ जाने देते हैं—जहाँ हम उस सर्वश्रेष्ठ धुन में समा सकते हैं। यही जीते-जी मरना है।

जज़्बात के बारे में एक नज़रिया

ज़रा सोचिए, ज़्यादा जज़्बाती हुए बिना जीने में कितना मज़ा है। यह सुनने में इतना अच्छा लगता है कि सच नहीं लगता? हम जज़्बातों के ज़रिए संसार में अपनी प्रतिक्रिया देते हैं। इन जज़्बातों के बिना हम रोबॉट के समान होंगे। संगीत से हमें आनंद नहीं मिलेगा। किसी भी तरह के घाटे का हम पर कोई असर नहीं होगा। किसी भी बात पर हमारी आँखों में आँसू नहीं आएँगे या हम किसी भी बात पर हँस-हँसकर लोटपोट नहीं होंगे।

हमारा मक़सद जज़्बातों के बिना जीना नहीं है बल्कि इन जज़्बातों के ख़ुद पर पड़ने वाले प्रभावों को क़ाबू में करना है। हमें अपने ज़ज़्बातों पर क़ाबू पाने या इससे भी बढ़कर इनसे बेलाग होने की कोशिश करनी चाहिए। हम अकसर इन्हें इनके वास्तविक रूप में नहीं देख पाते—ये सिर्फ़ विचार हैं। इन्हें पहचान लेने और इनसे बेलाग हो जाने पर हमारे जज़्बात हम पर हावी नहीं हो पाते।

सच्चा बैराग भजन-सिमरन द्वारा ही आता है। जज़्बातों के कारण हमारे अंदर जो प्रतिक्रियाएँ पैदा होती हैं भजन-सिमरन उन पर क़ाबू पाने में हमारी मदद कर सकता है। यह संतुलन बनाए रखने में भी हमारी मदद करता है।

हमारे जज़्बात अनिश्चित और गतिशील होते हैं क्योंकि इनका संबंध हमारे मन द्वारा पैदा किए गए विचारों से होता है। यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है, ये जज़्बात पल-पल बदलते रहते हैं, हमें अकसर इनके बारे में एहसास तक नहीं होता। अगर ये जज़्बात बेक़ाबू हो जाएँ तो ये हमारे जीवन में तबाही मचा सकते हैं और जीवन-भर हमें दु:ख दे सकते हैं।

यहाँ पर भजन-सिमरन काम आता है। यह हमें जज़्बात रहित नहीं बनाता। भजन-सिमरन से हम इन जज़्बातों के कारण होनेवाली प्रतिक्रियाओं के प्रति सचेत हो जाते हैं और इन पर क़ाबू पाने के लायक़ बन जाते हैं ताकि इनका हम पर बहुत ज़्यादा असर न हो। *अवेयरनैस ऑफ़ द डिवाइन* के लेखक लिखते हैं:

जब मन स्थूल जगत से जुड़े विचारों और जज़्बातों के बोझ तले दब जाता है तो अंतरात्मा की तरफ़ ध्यान ही नहीं जाता। हालाँकि यह आत्मा जीवन का आधार है लेकिन रोज़मर्रा के जीवन की ज़िम्मेदारियों को पूरा करते हुए हमें इसके होने का आभास ही नहीं रहता।

मन का सामना करना जीवन का सबसे मुश्किल काम है और इसे चुनौती देते समय हमें इसकी ताक़त का एहसास होना चाहिए। सतगुरु की दया-मेहर और अपनी तरफ़ से किए गए अथक प्रयास के बिना हम अपने मन तथा इसके द्वारा पैदा किए जज़्बातों पर कभी जीत हासिल नहीं कर सकते।

हम अनेक जज़्बातों से घिरे रहते हैं, कुछ इतने सूक्ष्म होते हैं कि हम उन्हें पहचान भी नहीं पाते। हम चाहे किसी भी परिस्थिति का सामना कर रहे हों, हमारे तेज़ी से बदलते जज़्बात हमारे महसूस करने और सोचने के तरीक़े को ही बदल देते हैं जिससे हमारा ध्यान और एकाग्रता भंग हो जाती है। इन जज़्बातों से ऊपर उठने या इन पर जीत हासिल करने का सिर्फ़ एक ही तरीक़ा है—अपने ख़याल को ऊँचा उठाकर तीसरे तिल पर एकाग्र करना।

रूहानी सफ़र की विशेषता है बदलाव; वह बदलाव जिससे हमारा रूहानी विकास होता है, जिससे अंत में आत्मज्ञान प्राप्त होता है। इसके लिए ज़रूरी है कि हम अपनी रहनी, सोच, कर्मों और मान्यताओं में बदलाव लाएँ। जैसे-जैसे हम ये बदलाव लाते हैं, हमारा भजन-सिमरन अधिक फलदायक होने लगता है। यह मार्ग हमें अधिक सच्चा लगने लगता है और हम अपने जज़्बातों और उनके हम पर पड़ने वाले प्रभाव के प्रति अधिक सचेत होते जाते हैं।

फिर हम सचेत रूप से डर, चिड़चिड़ेपन या क्रोध जैसे जज़्बातों को नियंत्रण में रखने की कोशिश करते हैं, क्योंकि हम अच्छी तरह जान जाते हैं कि इनका हम पर और दूसरों पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है। क्रोध और डर जैसे प्रबल जज़्बात अचानक और अनायास ही उभर आते हैं तथा कभी-कभी तो ये प्रचंड रूप धारण कर लेते हैं।

रूहानी मार्ग पर हम अपनी सीमाओं और कमज़ोरियों को भली-भाँति जान जाते हैं। महाराज जी से जब इस बारे में पूछा गया तब उन्होंने समझाया:

जब आप संतमार्ग पर चलते हैं और भजन–सुमिरन करते हैं तो आप पहले से अधिक बुरे नहीं हो जाते। आपको अपनी कमज़ोरियों का पहले से अधिक बोध होने लगता है।... और जब हम अपने दोष जान लेते हैं, तब क़ुदरती तौर पर हमें शर्मिंदगी महसूस होती है और हम उनसे छुटकारा पाने की कोशिश करते हैं।

जीवत मरिए भवजल तरिए

अलग–अलग घटनाओं, हालात और सोच की वजह से हमारे अंदर अलग–अलग जज़्बात पैदा होते हैं। जब हमें कोई ख़ुशख़बरी मिलती है तब हम ख़ुश हो जाते हैं, शायद बहुत आनंदित भी और जब हमारी ज़िंदगी में कोई अप्रिय घटना घटती है तब हम व्यथित और दु:खी हो जाते हैं; जब हमें डराया–धमकाया जाता है तब हम डरने लगते हैं। हम अकसर अपने जज़्बातों के आधार पर तय करते हैं कि हम ख़ुश हैं, क्रोधित हैं, उदास हैं, ऊब गए हैं या निराश हैं, लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि हमारी सोच सही हो।

जब एक ही तरह के विचार लगातार हमारे मन में उठते रहते हैं तब उन्हीं विचारों के अनुरूप हम अपने जज़्बातों को उनसे जोड़ लेते हैं, इससे हमारे अंदर एक ज़बरदस्त अस्वाभाविक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, जिसके कारण हम विचलित हो जाते हैं तब हम अपने विचारों को तथ्य मानकर स्वीकार कर लेते हैं। जब हम अपनी आंतरिक मनोदशा को सँवारने या बिगाड़ने वाले कारणों के बारे में जागरूक हो जाते हैं तब अपनी मानसिक स्थिति पर नियंत्रण पाना आसान हो जाता है, जिससे आख़िरकार हमें तनावपूर्ण हालात से बेहतर ढंग से निपटने में मदद मिलती है।

इस बात को समझकर कि हमारे जज़्बातों का हम पर क्या प्रभाव पड़ता है, हम अपना जीवन अधिक सहजता और संतुलन के साथ गुज़ार सकते हैं। अपने जज़्बातों को समझ लेने से हमारा ख़ुद पर पहले से ज़्यादा नियंत्रण हो जाता है जिससे हम अपने बेक़ाबू जज़्बातों का शिकार होने से बच जाते हैं।

रूहानी मार्ग पर हमारा एक ही मक़सद होता है: शांति प्राप्त करना और रूहानी तरक़्क़ी करना। क्रोध की वजह से हम अशांत और विचलित हो जाते हैं—ख़ासकर जब हम संतुलन, धैर्य और आत्म-नियंत्रण का माहौल बनाने की आशा से भजन-सिमरन करते हैं। आपे से बाहर होकर रूहानी तरक़्क़ी कर पाना मुमकिन नहीं है।

चाहे हम अपनी समझ के अनुसार रूहानी मार्ग पर चलने की पूरी कोशिश करते हैं फिर भी हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि जब तक हम तीसरे तिल पर नहीं पहुँच जाते तब तक अलग-अलग तरह के जज़्बातों के कारण अलग-अलग हालात पैदा हो सकते हैं जो मार्ग में रुकावट बन सकते हैं, हमें दु:ख दे सकते हैं और विचलित कर सकते हैं। हम नहीं जानते कि कर्मों के कारण हमें किन हालात में से गुज़रना पड़ेगा, लेकिन अगर हम अपना संतुलन बनाए रखें और अपने जज़्बातों और विचारों पर नज़र रखें तो फिर हमारे लिए हर तरह के कर्मों और हालात का सामना करना आसान हो जाएगा।

इस बात को याद रखने से भी मदद मिलती है कि हमारा प्रारब्ध हमारे जन्म से पहले ही तय हो चुका है। प्रारब्ध की वजह से बने हालात को बदला नहीं जा सकता और सतगुरु इन हालात में से गुज़रने के लिए हमारा मार्गदर्शन कर रहे हैं। लेकिन अभ्यास और सिमरन से हम जज़्बातों के कारण होनेवाली प्रतिक्रियाओं पर क़ाबू पा सकते हैं। आत्म-संयम को बढ़ाने के लिए हम *एसेंशियल संतमत* पुस्तक में दिए गए सुझाव पर अमल कर सकते हैं:

सतगुरु समझाते हैं कि हम अपने ध्यान को उन विचारों और भावनाओं की तरफ़ से हटा सकते हैं जो हमारे ख़याल को ज़बरदस्त तरीक़े से भटकाते हैं। इन विचारों और भावनाओं के बारे में बार-बार सोचते रहने के बजाय हम अपने ध्यान को इनसे अधिक शक्तिशाली, अंतर्मुख लफ़्ज़ों को दोहराने में लगा सकते हैं। इसे सिमरन कहा जाता है।

यह हमारा दुर्भाग्य है कि जब हम बदलते जज़्बातों के आवेग में बह रहे होते हैं तब हम यह भूल जाते हैं कि सिमरन और सतगुरु की याद संतुलन बनाए रखने में हमारी मदद कर सकते हैं।

जिस तरह बाइबल में दाऊद को गोलियत का सामना करना पड़ा था उसी तरह हमें भी अत्यंत शक्तिशाली मन का सामना करना है। शायद हमने यह सोच लिया है कि जैसे दाऊद ने अपनी गुलेल से गोलियत को मार गिराया था, वैसे ही हम भी बड़ी आसानी से मन पर क़ाबू पा लेंगे। लेकिन जल्द ही हमें यह एहसास हो जाता है कि चाहे भजन-सिमरन का उद्देश्य हमारे ध्यान को अंतर्मुख करना और मन पर नियंत्रण पाना है, मगर यह जीवन-भर चलने वाला संघर्ष है।

भजन-सिमरन के दौरान हम मन को स्थिर करने और अपने ध्यान को अंदर एकाग्र करने की कोशिश करते हैं, लेकिन हम यह पाते हैं कि मन फैले हुए विचारों, भावनाओं, धारणाओं और संवेदनाओं के ज़रिए हमारे ख़याल को बाहर भटकाकर हम से एक क़दम आगे रहता है। जब हम एक ही तरह के विचारों और यादों को बार-बार दोहराते हैं तब हम चाबी वाले खिलौनों के समान होते हैं, जो एक ही दिशा में चलते रहते हैं और कभी यह समझ ही नहीं पाते कि उनके पास कोई अन्य विकल्प भी हो सकता है। वह विकल्प सिमरन है।

हमारे अंदर बार-बार वही सब कुछ सोचने की यह फ़ुज़ूल आदत इतनी ज़्यादा पक चुकी है कि हम अकसर इससे अनजान रहते हैं। लेकिन सिमरन के ज़रिए जो कि एक तरह से दोहराना ही है, मन पर नए प्रभाव डालकर मन को बार-बार उन्हीं विचारों और जज़्बातों के बारे में सोचने से रोका जा सकता है।

अपने प्रारब्ध कर्मों, जिसे हम ज़िंदगी कहते हैं, को भोगते हुए हम अकसर यह जान ही नहीं पाते कि कौन-सा रास्ता अपनाएँ या आगे क्या होनेवाला है। हमारे साथ कोई ऐसा मार्गदर्शक नहीं होता जो मार्ग में आनेवाले ख़तरों से सावधान करके हमें सही मार्ग दिखा सके। इसके बजाय

हमारे मन में डर और चिंता जैसी भावनाएँ होती हैं जो भ्रम और निर्बलता का कारण बनती हैं।

धीरे–धीरे अब हमें यह एहसास हो रहा है कि अपने विचारों और जज़्बातों पर क़ाबू पाने की हमारी कोशिशें काफ़ी नहीं हैं। उनसे बेलाग होने के लिए हमें अपने सतगुरु की दया–मेहर और मार्गदर्शन का सहारा लेना पड़ेगा। जब हम इस रूहानी मार्ग पर आते हैं तब इस मार्ग की महिमा हमारे मन को मोह लेती है। हम श्रद्धा और आश्चर्य के साथ इस मार्ग पर चलना शुरू करते हैं और वह सब करने के लिए तैयार हो जाते हैं जिसकी उम्मीद हमसे की जाती है। लेकिन निस्संदेह सतगुरु स्वयं हमारे मन को मोह लेते हैं और हमें अपनी ओर खींच लेते हैं। हम उन पर और उनके इस वायदे पर पूरा भरोसा कर सकते हैं कि वह हमारी सँभाल करेंगे और धुरधाम तक इस सफ़र में हमारे अंग–संग रहेंगे।

संतुलन बनाए रखना

संतुलन बनाकर रखें। ये तीन छोटे-छोटे शब्द बहुत मायने रखते हैं और हमारे जीवन के अनगिनत हालात पर लागू होते हैं। हम कई तरह से अपना संतुलन खो देते हैं जब हम अपने परिवार की तरफ़ ध्यान न देकर अपनी नौकरी को ज़्यादा अहमियत देते हैं—एक और ई-मेल देखना, एक और फ़ोन कॉल सुनना, एक और समस्या का समाधान ढूँढना और यह सूची बढ़ती ही जाती है।

हम अपने कार्यों में इतने अधिक व्यस्त हो जाते हैं कि हम संतुलन का महत्त्व ही भूल जाते हैं। लेकिन अगर हम संतुलन खो देते हैं तो हम उस मार्ग पर क़ायम नहीं रह पाएँगे जिसे हमने ख़ुद चुना है। इसलिए सतगुरु समझाते हैं: संतुलन बनाकर रखें।

कर्मों का क़ानून पूरी तरह से संतुलन पर आधारित है। कर्म और फल का सिद्धांत क़ुदरत का क़ानून है जिसके अनुसार हमें अपने कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है। यह कार्य और कारण के सुप्रसिद्ध नियम से मिलता-जुलता है।

मनुष्य सब कुछ जीवित रहने और ख़ुश रहने के बीच में संतुलन बनाने के लिए करता है—दूसरे शब्दों में, तर्कशील मन और आत्मा के बीच में संतुलन बनाकर रखने के लिए। संतुलन में रहने के लिए हमें तर्क और आत्मा दोनों को अहमियत देनी चाहिए, लेकिन हममें से बहुत-से लोग इसे नामुमकिन मानते हैं। दुनिया हमें आत्मा को नज़रअंदाज़ करने के लिए कहती है जबकि रूहानियत में हमें मन की ओर ध्यान न देने के लिए कहा जाता है।

हमें लगता है कि भजन-सिमरन संतमत का सार है, इसलिए कितना अच्छा होगा अगर हम हर रोज़ ज़्यादा से ज़्यादा समय भजन-सिमरन को दें। हो सकता है कि हम शादी न करने, कोई भी कार्य न करने, बच्चे पैदा न करने, एकांत में रहने और पूरा दिन भजन-सिमरन करने को ही सबसे उत्तम

समझ लें। लेकिन जब हम एक–तरफ़ा हो जाते हैं तब स्वाभाविक तौर पर हमारा मन प्रतिक्रिया करता है। इसलिए हमें संतुलन बनाकर रखना चाहिए।

इसी तरह सतगुरु समझाते हैं कि हमें संसार में गृहस्थ जीवन जीना चाहिए। संत–सतगुरुओं का भी परिवार होता है फिर भी वे अपना संतुलन बनाए रखते हैं। जब भी हम अपने जीवन में एक–तरफ़ा हो जाते हैं तब हम अपना मक़सद और संतुलन गँवा बैठते हैं।

संतुलन बनाए रखना इतना मुश्किल क्यों है? क्योंकि हमें हमेशा ख़ास बनना, दूसरों से बेहतर होना, प्रतिस्पर्धी होना सिखाया गया है। हम ख़ास और श्रेष्ठ समझे जाने को अपनी क़ाबिलीयत समझते हैं।

रूहानियत का मतलब दूसरों से अलग होना नहीं है। इस संसार में रहते हुए हमारा हमेशा यही प्रयास रहता है कि हम दूसरों से ख़ास हों। यह रूहानियत—जिसका मतलब ख़ुदी को मिटाकर उस परम सत्ता में समा जाना है—के विपरीत है। हम ख़ास बनने के लिए जितना अधिक प्रयास करते हैं उतना ही हम सच से दूर होते जाते हैं। यदि हम सचमुच हर चीज़ के आधार उस परमात्मा में अभेद होने की कोशिश करते हैं तो हमारे अंदर चलनेवाला द्वंद्व पूरी तरह से समाप्त हो जाएगा।

असंतोष और अपेक्षाएँ भी संतुलन खो देने का कारण हैं। हम अपनी ज़रूरतों को बढ़ा लेते हैं और तर्क देते हैं कि हम उनके पूरा होने का इंतज़ार क्यों न करें। अगर हम इस सोच के साथ ज़िंदगी जीते हैं कि जो कुछ भी हमारे पास है वह पर्याप्त नहीं है तो हम और अधिक हासिल करने के लिए अपना सब कुछ क़ुर्बान कर देते हैं और ऐसा करके अपना संतुलन खो बैठते हैं।

जीवन में आने वाली कठिनाइयाँ और मुश्किलें भी हमारे संतुलन के खो जाने की वजह बन सकती हैं। हम सभी की अपनी–अपनी परेशानियाँ होती हैं। हमारे जीवन में ऐसे समय भी आते हैं जब हमारे किसी प्रियजन का निधन हो जाता है या वह किसी बीमारी से जूझ रहा होता है या जब ऐसा लगता है कि हमारा परिवार बिखर रहा है। कभी–कभी हमें ऐसा लग सकता है कि जैसे पूरी दुनिया हमारे ख़िलाफ़ है। और कभी–कभी हम रूहानी

तौर पर नीरसता और ख़ालीपन महसूस कर सकते हैं—मानो हम बिलकुल बेसहारा हैं, जिसकी वजह से हम अपना संतुलन खो सकते हैं।

हालाँकि हुज़ूर महाराज चरन सिंह जी अकसर मुश्किलों को छिपा हुआ वरदान कहा करते थे क्योंकि जीवन के सबसे कठिन समय में ही हम प्रभु के नज़दीक खिंचे चले जाते हैं। संत-महात्मा समझाते हैं कि दुःख हमें निर्मल करते हैं और हमें अंतर में चिरस्थायी आनंद को प्राप्त करने के लायक़ बनाते हैं।

यह बात चाहे कितनी भी कड़वी क्यों न लगे, मगर परिवार में किसी की मृत्यु, आर्थिक मुश्किलें, बीमारी या निरादर ये सभी प्रभु की दया-मेहर की निशानियाँ हैं। हमें हर उस घटना के लिए शुक्रगुज़ार होना चाहिए जिससे हमें परमात्मा और उसके प्रेम की याद आए और जिसके कारण हमारा ध्यान संसार की तरफ़ होने के बजाय उस परमात्मा की ओर खिंचा चला जाए। हम ख़ुद को यह तसल्ली भी दे सकते हैं कि इन कठिनाइयाँ द्वारा हमारे कर्मों का भुगतान होता है और हमारी सहन-शक्ति बढ़ती है।

हम अपने जीवन में संतुलन को लगातार कैसे बनाए रख सकते हैं? हमें ज़रा सोच-विचारकर अपनी प्राथमिकताएँ तय करनी होंगी। हमें जीवन के भौतिक और रूहानी दोनों पहलुओं पर विचार करना होगा। जीवन के भौतिक पहलू में हमारा दूसरों के प्रति और ख़ुद के प्रति—यहाँ तक कि शरीर के प्रति रवैया भी शामिल है। आख़िरकार, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के बिना हम जीवन और भजन-सिमरन दोनों का ही आनंद नहीं ले सकते।

हमारा परमार्थी जीवन ही हमारी बुनियाद, हमारी पहचान और जीने के मक़सद को दर्शाता है। हमें यह याद रखना चाहिए कि हम इस ब्रह्मांड का केंद्र नहीं हैं; हमें अपने ध्यान को परमात्मा की ओर मोड़ने को पहल देनी चाहिए। हम अपने सतगुरु द्वारा दी गई संतुलन बनाए रखने की सरल और व्यावहारिक सलाह को सच्चे दिल से मानकर ऐसा कर सकते हैं।

जब हम इस मार्ग पर चलना शुरू करते हैं तब उत्साह में आकर हमारे मन में अचानक तपस्वी और संन्यासी बनने की चाहत पैदा हो सकती है। हो सकता है कि हम ख़ुद को एक कमरे में बंद कर लें ताकि हम सारा

दिन भजन-सिमरन कर सकें और अपनी ज़िम्मेदारियों से भाग सकें। लेकिन संत-महात्मा हमें ख़बरदार करते हैं कि हमें सामान्य जीवन जीना चाहिए और अपनी ज़िम्मेदारियों को निभाना चाहिए। वे हमें निर्लेप होकर जीवन जीने और भजन-सिमरन को अपनी दिनचर्या का अभिन्न अंग बनाने की सलाह देते हैं—वे हमें मध्य मार्ग चुनने और संयम में रहने के लिए कहते हैं।

हमें साधारण इनसान बनकर सामान्य जीवन जीना चाहिए। हमें भजन-सिमरन को अपनी सामान्य दिनचर्या का हिस्सा बनाना चाहिए। जब व्यवसाय और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों के कारण जीवन में चुनौतियाँ आएँ तब हम सतगुरु की शरण ले सकते हैं। सतगुरु इस बात पर ज़ोर देते हैं कि अपने कार्य-व्यवहार में संतुलन बनाए रखने के लिए, हमें अपने मन को स्थिर करना होगा ताकि हम शांति का अनुभव कर सकें।

हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? हममें से ज़्यादातर लोगों का मन पूरी तरह से बेक़ाबू है। इसमें एक के बाद एक विचार उठते ही रहते हैं और हमारा मन शायद ही कभी स्थिर होता हो। अगर हम चिंता करना छोड़ देते हैं तो इच्छाएँ पैदा हो जाती हैं और फिर हम उन्हीं के बारे में सोचते और चिंता करते रहते हैं। मन को शांत और स्थिर करना हमारे लिए एक बड़ी चुनौती बन जाता है।

संत-महात्मा हमें आंतरिक संतुलन प्राप्त करने के लिए अलग-अलग तरीक़े से समझाते हैं—हम संतुलन की उस अवस्था को कैसे प्राप्त करें। सतगुरु हमें समझाते हैं कि यदि हम निज-घर वापस जाना चाहते हैं और परमात्मा में अभेद होना चाहते हैं तो हमें आंतरिक स्थिरता प्राप्त करनी पड़ेगी।

जब हमें लगे कि अपने मन को वश में करके पहले जैसा संतुलन बनाए रखना हमारे लिए मुमकिन नहीं है तब हमें याद रखना चाहिए कि सतगुरु ख़ुद हमें इस भवसागर से पार लगाने के लिए आए हैं। वह हमारी मदद के लिए हमेशा मौजूद हैं, लेकिन यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम सिमरन के लिए ज़्यादा से ज़्यादा कोशिश करें और एक अच्छे इंसान बनकर संतुलित जीवन व्यतीत करें।

अपना भविष्य ख़ुद बनाएँ

हम अद्भुत और बेहद दिलचस्प संसार में रहते हैं। इंसानों में मन को मोह लेनेवाली विविधता है और फिर बाक़ी की रचना और उसमें जीवन के अलग-अलग रूपों पर ग़ौर कीजिए। यह देखना बहुत आश्चर्यजनक है कि इस ब्रह्मांड में जीवन के कितने अलग-अलग और मनोहर रूप मौजूद हैं। ये सब देखकर कोई भी हैरान हो सकता है: ये सब अस्तित्व में कैसे आया? और इसमें, जो कुछ हम अपनी इंद्रियों के ज़रिए अनुभव करते हैं, उसके अलावा कितना कुछ और है?

अगर हम किसी भीड़-भाड़ वाली जगह पर जाते हैं, जैसे किसी मॉल में, तो हमें हर तरह के लोग दिखाई देते हैं, सभी अपने ढंग से, अपनी कार्य-योजना के अनुसार, अपने-अपने काम में लगे हुए हैं। इन सभी अलग-अलग लोगों को देखकर हैरानी होती है कि किस तरह सभी अपनी आमतौर पर 'सामान्य' कही जानेवाली ज़िंदगी में व्यस्त हैं। यह सोचकर ताज्जुब होता है कि इनके जीवन ने क्या रूप ले लिया है और आगे चलकर ये किन अलग-अलग रास्तों से गुज़रेंगे।

लेकिन अगर हम उन विभिन्न संत-महात्माओं के उपदेश या कथनों पर विचार करें जो हमें सत्य का मार्ग दिखाने के लिए इस संसार में आते हैं तो एक ही बुनियादी बात हमारी समझ में आती है कि ये सब कर्मों का खेल है। ये सभी जीव, चाहे वे इनसान हों या अन्य जीव, अपने-अपने प्रारब्ध के अनुसार जीवन व्यतीत कर रहे हैं। असल में, इस संसार में हम जो कुछ भी देखते हैं, वह सब कर्मों के दायरे में आता है। सारा स्थूल जगत कर्म-भूमि है, यहाँ पर जो कुछ भी होता है पिछले जन्मों में किए गए कर्मों के फलस्वरूप होता है।

हम भी इस सिद्धांत से बाहर नहीं हैं। हम भी अपने कर्मों के फलस्वरूप भुगतान दे रहे हैं। सौभाग्य से, अपने सतगुरु के मार्गदर्शन द्वारा हम कर्म और फल के नियम को समझ पाएँ हैं। उन्होंने हमें कर्म-फल और पुनर्जन्म के

मूल सिद्धांत के बारे में समझाया है, जिससे हम अपने इर्द-गिर्द घटनेवाली घटनाओं का कारण समझ पाएँ हैं।

हमें एक सीधा-सादा सिद्धांत समझने की ज़रूरत है क्योंकि भले ही कर्म-फल का सिद्धांत और पुनर्जन्म दो अलग-अलग धारणाएँ लगें, मगर ये दोनों एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं; ये दोनों एक ही सत्य का हिस्सा हैं। इस बात की समझ आ जाने पर, हम अपने भविष्य को अच्छा या बुरा बना सकते हैं। हम दया-हीन स्वार्थ-पूर्ण जीवन जीने का फ़ैसला ले सकते हैं या आशावादी सोच को अपनाकर ऐसे नेक इनसान बनने की कोशिश कर सकते हैं जो संसार के सभी जीवों के प्रति प्रेम और सहानुभूति से पेश आए। दूसरे विकल्प को चुनकर हम अपना भविष्य उज्ज्वल बना सकते हैं और इसके साथ ही सतगुरु के उपदेश पर चलकर हम रूहानी मुक्ति के मार्ग पर तेज़ी से आगे बढ़ पाएँगे।

चल री सुरत अब गुरु के देश

स्वामी जी महाराज हमें समझाते हैं कि हम वास्तव में इस दुनिया के नहीं हैं। आप इसे पराया देश कहते हैं। यहाँ जो चीज़ें हमें इतनी वास्तविक और अपनी-सी लगती हैं, वे सब मायामय हैं। आप आत्मा को सतगुरु के लोक में आने का निमंत्रण देते हैं:

चल री सुरत अब गुरु के देश। जहाँ न काया कर्म कलेश॥
तन मन इन्द्री यह परदेश। छोड़ो भेष भवन का लेश॥
सुनो कान से गुरु संदेश। सुरत शब्द ले धाओ शेष॥

सारबचन संग्रह

स्वामी जी महाराज हमें समझाते हैं कि शरीर, मन और इंद्रियाँ हमारा असली वुजूद नहीं हैं। ये सब एक ऐसे खेल का हिस्सा हैं जिसमें हम फँसे हुए हैं। यह बहुत विशाल और पेचीदा खेल है: इस खेल को आत्मा द्वारा अलग-अलग हालात में अलग-अलग शरीर धारण करके खेला जाता है। यह खेल स्थान और समय के मंच पर खेला जाता है जो कि कड़े नियमों या क़ानूनों के अधीन होता है। यह खेल हमें वास्तविक लगता है लेकिन संत-महात्मा हमें समझाते हैं कि ये सब भ्रम है।

हम इस संसार के नहीं हैं। हम परम धाम से आए हैं, एक ऐसे मुक़ाम से जो देवताओं की पहुँच से भी परे है—एक ऐसे मंडल से जहाँ स्थूल, सूक्ष्म और कारण जगत के शासक काल की कोई शक्ति या प्रभाव नहीं है।

मन द्वारा किए कर्मों और इच्छाओं के फलस्वरूप आत्मा युगों-युगों से एक जन्म के बाद दूसरे जन्म, एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को धारण कर आवागमन के अनंत चक्र में पड़ी हुई है। इस तरह आत्मा कर्मों, इच्छाओं और मोह के बोझ को लगातार बढ़ाती जाती है जो इसे तब तक इस खेल से बाँधे रखता है जब तक कि वह अपने असल स्वरूप और अपने मूल को नहीं जान लेती।

संत-महात्मा समझाते हैं कि आत्मा ही जीवन को चलानेवाली वास्तविक शक्ति है। मन ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए आत्मा को अपने अधीन किया हुआ है और फलस्वरूप आत्मा इस दृश्यमान जगत के प्रलोभनों में फँस गई है। हम इंद्रियों और उनसे उत्पन्न हुई इच्छाओं के कारण इस संसार में फँस गए हैं। इस प्रकार मन इंद्रियों का ग़ुलाम बन गया है और हम अपनी आत्मा को ही भूल गए हैं। हम असल सत्य से पूरी तरह बेख़बर हो गए हैं। अपने कर्मों के कारण, हम अपने भाग्य की कठपुतली बन गए हैं।

मन, शरीर और इंद्रियाँ हमारे सामने मुश्किल चुनौतियाँ पेश करते हैं और इन पर जीत हासिल करने में पूरा जीवन लग सकता है। मन के प्रभाव से बच पाना बेहद मुश्किल है। हम संत-महात्माओं के उपदेश को सुनते हैं और उसे सच मान लेते हैं। हम स्वयं को कितना भाग्यशाली समझते हैं, मगर मन फिर भी मनमानी करता रहता है; हम ख़ुद को लोभ, क्रोध, ईर्ष्या, महत्वाकांक्षा और कई तरह के मोह से घिरा हुआ पाते हैं।

आंतरिक रूहानी मंडलों में दाख़िल होने के लिए, हमें संत-सतगुरुओं के निर्देश के अनुसार अपनी चेतना के स्तर को ऊँचा उठाना पड़ेगा। यह शायद इनसान द्वारा किया जानेवाला सबसे कठिन कार्य है। यह अभ्यास ही संतमत का असल सार है। यह शब्द-धुन में समाकर आत्मा के परमात्मा से पुन: मिलाप की प्रक्रिया है। शब्द में समाए बिना, हम मन और माया के दायरे से ऊपर उठकर अपने सच्चे घर नहीं लौट पाएँगे।

संत-महात्मा समझाते हैं कि सारी रचना शब्द द्वारा ही रची गई है। यह असल में परमात्मा का क्रियाशील रूप है, और यदि हम ख़ुद को इसमें लीन कर दें तो हम अंतत: परमपिता परमात्मा में समा जाएँगे। हालाँकि शब्द को स्पष्ट रूप से सुनने के लिए पहले हमें अपने ध्यान को बाहरी जगत से हटाकर तीसरे तिल पर एकाग्र करना पड़ेगा, जहाँ पर मन और आत्मा की गाँठ बँधी हुई है।

दु:ख की बात तो यह है कि हममें से ज़्यादातर लोगों को आत्मा के बारे में पता ही नहीं है। हमारी आत्मा कर्मों, इच्छाओं और मोह के बोझ

तले इतना दब चुकी है कि हमें इसके होने का एहसास ही नहीं होता। यह मार्ग आत्मा की मुक्ति के लिए है, मगर इस पर चलना मन को पड़ेगा—ध्यानपूर्वक और मनोबल के साथ। इसलिए हमारी ज़िम्मेदारी अपने मन को अपनी आत्मा की असलियत के प्रति जागरूक करना है और इसके लिए प्रतिबद्धता, अनुशासन, हुक्म के पालन और भक्ति-भाव की ज़रूरत है। बड़े महाराज जी ने एक पत्र में अपने शिष्य को समझाया:

> *इस चंचल मन को स्थिर करने और ख़याल को शरीर से समेटकर तीसरे तिल में ठहराने का काम धीरे-धीरे होता है। एक सूफ़ी फ़क़ीर कहते हैं, "प्रियतम को हासिल करके उसे अपनी बाँहों में बाँध लेना ज़िन्दगी भर का काम है।" ध्यान को आँखों के केन्द्र में इकट्ठा करना एक चींटी के दीवार पर चढ़ने के समान है। चींटी बार-बार गिरती है, फिर भी चढ़ने की कोशिश करती रहती है और आख़िर दीवार के ऊपर पहुँच जाती है। लगातार मेहनत से वह सफल हो जाती है और फिर नहीं गिरती।... सुमिरन और भजन को एक रोज़ का काम या बोझ समझकर उदास मन से नहीं करना चाहिए, बल्कि प्रेम और चाव से करना चाहिए।*
>
> परमार्थी पत्र, भाग2

बड़े महाराज जी ने एक अन्य पत्र में फ़रमाया कि हमें मार्ग पर पूरी सफलता इसलिए नहीं मिलती क्योंकि हम अपने भजन-सिमरन को प्राथमिकता नहीं देते—संसार और इसकी वस्तुएँ हमारे लिए रूहानियत से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। इस संसार में भी सफलता तभी मिलती है जब हम दिलो-जान से किसी कार्य में लग जाते हैं। आप फ़रमाते हैं कि हमारे मन में बहुत ज़्यादा सांसारिक तृष्णाएँ होती हैं और हमने इसे खुली छूट दी हुई है।

मन की कमज़ोरियों पर क़ाबू पाने का सिर्फ़ एक ही तरीक़ा है इनसे ऊपर उठना और हम ऐसा सिर्फ़ अपने भजन-सिमरन के प्रति प्रतिबद्ध होकर ही कर सकते हैं। हम रोज़ाना अपने दाँत साफ़ करते हैं, कपड़े धोते हैं, घर की सफ़ाई करते हैं और नहाते व खाना खाते हैं—ये सभी कार्य हमारे शारीरिक

स्वास्थ्य के लिए ज़रूरी हैं। लेकिन हम सिर्फ़ भौतिक जीव नहीं हैं—हमें अपनी आत्मिक ज़रूरतों का भी ध्यान रखना चाहिए। भजन-सिमरन इन ज़रूरतों को पूरा करता है। हमें चाहिए कि हम अपनी आत्मा की निर्मलता, विकास और ख़ुराक की तरफ़ भी उचित ध्यान दें।

हमें यह समझने की ज़रूरत है कि भजन-सिमरन कितना महत्त्वपूर्ण है और इसे विश्वास व प्रेम के साथ करना चाहिए। शुरू में इसके लिए थोड़ा संघर्ष करना पड़ सकता है लेकिन जैसे-जैसे हम इसे दृढ़तापूर्वक करते रहते हैं, हमें एहसास होता है कि सतगुरु की दया-मेहर और मदद के बिना हम कुछ भी नहीं कर सकते।

जब तक हम अपने मन और इंद्रियों के ग़ुलाम बने रहते हैं तब तक आत्मा की जुदाई की पीड़ा क़ायम रहती है। हमारे सतगुरु हमारे निज-घर लौटने का इंतज़ार कर रहे हैं। वह हर तरह से हमारी मदद करने के लिए तैयार हैं और मदद करते भी हैं। वह सब कुछ संभव बना देते हैं। जब वह हमें प्रेम की दात बख़्श देते हैं तब हम प्रेम और श्रद्धा से उनकी भक्ति करने लग जाते हैं। सतगुरु के लिए प्यार के बिना हमारी रूहानियत सिर्फ़ धारणा है। हमारे जीवन में सतगुरु की मौजूदगी से हमें यह मार्ग सच्चा लगने लगता है। देहधारी सतगुरु की संगति द्वारा सदा के लिए हमारा कायाकल्प हो जाता है।

हम अपनी कोशिशों द्वारा इस रूहानी सफ़र को पूरा नहीं कर सकते—हम उनकी मौज से ही इस सफ़र को शुरू कर पाएँ हैं। युगों-युगों की जुदाई के बाद हम वापस घर लौट रहे हैं। परमात्मा की इस दया-मेहर को लफ़्ज़ों में बयान कर पाना मुमकिन नहीं है। कैसी दया-मेहर और कैसा सौभाग्य! इस बार हमें निज-घर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। कितने जन्मों से हम आवागमन के चक्र में फँसे हुए हैं, हमारी आत्मा कारण, सूक्ष्म और स्थूल पर्दों में लिपटी हुई है और उनसे जुड़ी हर चीज़ के साथ बँधी हुई है। पिछले संस्कारों, इच्छाओं और मोह के बावजूद आत्मा हमेशा परमात्मा के लिए तड़पती रहती है।

समय के साथ हमें यह एहसास होने लगता है कि इस मार्ग पर हमारी दृढ़ता ही अपने आप में दया-मेहर की स्पष्ट निशानी है। और देर-सवेर, जब परमात्मा की मौज होगी, हम रूहानी तरक़्क़ी कर पाएँगे और हमारा कायाकल्प हो जाएगा। तब हमारे सारे संदेह दूर हो जाएँगे। जैसा कि संत एकनाथ ने पुस्तक स्वर अनेक, गीत एक में कहा है:

तीन लोक का देखा नूर,
दिखा फिर हृदय में सतगुरु का स्वरूप।
फैला प्रकाश दीपक की बाती से,
हो गई देह पुरनूर प्रकाश से।
है चेतन प्रकाश यह मेरी आत्मा का,
कहे एकनाथ नाश हुआ अब सभी भ्रमों का।

हम उपदेश पर अधिक भरोसा करने लगते हैं, हमें पूरा विश्वास हो जाता है कि सतगुरु हमारी सहायता करेंगे। हमारा प्रेम परिपक्व होने लगता है और हम बड़े श्रद्धा-भाव से, तन-मन से भजन-सिमरन करने लग जाते हैं। एक दिन वह समय ज़रूर आएगा जब हम विशाल आंतरिक मंडलों में से गुज़रते हुए आख़िरकार अपने सतगुरु के देश में पहुँच जाएँगे।

सुकून वाली जगह की खोज

इनसान कुछ भी नहीं जानता। शायद यह कहना ज़्यादा सही होगा कि वह इस दुनिया, इस धरती या इस जीवन से परे की किसी भी चीज़ के बारे में कुछ भी नहीं जानता। यहाँ तक कि इस धरती की चीज़ों के बारे में भी उसका नज़रिया बेहद सीमित है। वह जानता है कि धरती की चीज़ों का अध्ययन किया जा सकता है, लेकिन इस दुनिया से परे की चीज़ों का क्या? उसके पास इस बात का कोई सबूत नहीं है कि किसी इनसान को उन चीज़ों के बारे में पता है, न ही इस बात का कि मृत्यु से परे क्या है और न ही इस बात का कि किसी भी जीते-जागते इनसान ने कभी भी इस जीवन से परे जो कुछ हो रहा है, उसे देखा है। यह सब सुनी-सुनाई बातों और विश्वास पर आधारित है।

इतने सारे विचार, इतने सारे धर्म, इतने सारे सत्य। अलग-अलग मान्यताएँ भी उतनी ही अलग हैं।

उसका विश्वास पहले से ही कम है और जैसे-जैसे वह इन विचारों पर ग़ौर करता है, उसका विश्वास और कम होता जाता है। इस अजीब-सी दुनिया में उसे अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करने की ज़रूरत है। उसे अपने सुकून के लिए एक जगह—एक सुरक्षित जगह ढूँढने की ज़रूरत है। उसे अपने मन को इस तरह से ढालने की ज़रूरत है कि उसका मन ख़ुद-ब-ख़ुद उस जगह पर चला जाए—उसे उस जगह को अपनी सुकून वाली जगह बनाना है।

वह अपने लिए सुकून वाली जगह कहाँ खोजे? उसके अंदर एक आवाज़ है जो उसे दिन-रात चलते रहने की प्रेरणा देती है। वह मन ही मन रुककर सोचता है और चीज़ों को सरल बनाने की कोशिश करता है। उसे उन चीज़ों की खोज करनी होती है जिनके बारे में वह पूरे विश्वास से जानता है। उसे सबूत खोजने होते हैं। या शायद नहीं? फिर सुबह होती है और उसे लगता है कि आज फिर से गर्मी होगी। जैसे ही सूरज निकलता है, वह एक कप कॉफ़ी पीते हुए सूरज के उदय होने के दृश्य को समझने की कोशिश करता है।

उसके मन में तरह–तरह के विचार उठने लगते हैं। वह सोचने लगता है कि जल्द ही, एक–दो महीने में गर्मी कम होने लगेगी। फिर पतझड़ आ जाएगी और उसके बाद सर्दी आएगी। और फिर जल्दी ही बसंत नव–जीवन लेकर आ जाएगा। वह फिर से हैरान होकर सोचता है कि इस सबके पीछे क्या कारण है। आसमान में दिखाई देता आग का यह गोला (सूरज) जो सबके जीवन का आधार है अब आसमान में बहुत ऊँचा चढ़ गया है और रात में इसकी जगह पर चाँद होगा। चिड़ियाँ चहकती हैं, चींटियाँ मेहनत करती हैं, तूफ़ान आते हैं, फूल खिलते हैं, पेड़ तेज़ हवा में झूमते हैं जिससे बारिश आती है।

कोई तो ताक़त है जिसके कारण यह सब हो रहा है। उसे इस बात पर कोई संदेह नहीं है। वह इसे उतनी ही सरलता और स्पष्टता से स्वीकार करता है जितनी सरलता से इसे प्रस्तुत किया गया है; इसके पीछे कोई छिपा हुआ अर्थ नहीं है। तभी उसे एहसास होता है कि अगर उसे कभी किसी सबूत की ज़रूरत पड़ी तो यही वह सबूत है! सूर्य, चंद्रमा, ग्रहों और आकाशगंगाओं, पृथ्वी पर रहने वाले जीव–जंतुओं और पौधों, हवाओं, बादलों, ज़मीन और पानी के बारे में उसके विचार अचानक उसे जीवित होने का एहसास कराते हैं। इतना भरपूर जीवन और इतनी गतिशीलता किसी ताक़त के होने का ही तो सबूत है!

क्या इस एक ताक़त या सृजनात्मक जीवन–शक्ति के लिए अलग–अलग धर्मों में अलग–अलग शब्द हो सकते हैं?

और फिर उसे याद आता है कि वह एक ऐसे मार्ग के बारे में जानता है जिसमें सभी धर्मों का सार समाया हुआ है। एक ऐसा मार्ग जो तोड़ता नहीं बल्कि जोड़ता है। जो कहता है कि इस बात से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि आप किस धर्म को मानते हैं, इस मार्ग पर चलने के लिए आपको अपना धर्म छोड़ने की ज़रूरत नहीं है।

यह मार्ग पुनर्जन्म और कर्म–फल के सिद्धांत द्वारा यह समझाता है कि संसार में क्यों कुछ लोगों का जीवन इतना अच्छा है जबकि अन्य लोग इतने कष्टों से भरा जीवन जीते हैं।

उसे हाफ़िज़ का एक उद्धरण याद आता है जो इस प्रकार है:

ऐ हाफ़िज़, वह यार दिन-रात हमारे साथ है,
वह हमारी जिंद-जान है जो हमारी रगों में बहता है।

ख़्वाजा हाफ़िज़

उसे लगता है कि उसके लिए इस कथन की गहराई को समझ पाना मुश्किल है। लेकिन फिर उसे याद आता है, नहीं, उसे पता है कि वह ताक़त हर पल, हर जगह मौजूद है। वह अब भी उस ताक़त को देख रहा है!

वह मार्ग उसे समझाता है कि इस रचना को समझने के लिए उसकी बुद्धि बहुत सीमित है; वह इस रचना को बहुत सीमित नज़रिए से देखता है। यह भी कि उसे सब कुछ जानने की ज़रूरत नहीं है। उसे सिर्फ़ कुछ ही चीज़ें जाननी हैं। उसे और कुछ भी याद रखने की ज़रूरत नहीं है।

और हाँ, इस सबके लिए विश्वास होना ज़रूरी है पर अब वह इसके लिए ख़ुद कोशिश कर सकता है क्योंकि यही सत्य है। और इस मार्ग पर चलने के लिए उसके दिल में दीनता, ईमानदारी और प्यार होना चाहिए। उसे बस देहधारी गुरु की संगति में आकर उनके उपदेश को सुनना है। और विश्वास करने या न करने का फ़ैसला उसे ख़ुद करना है, पर वह विश्वास करे या न करे, जब उसका ध्यान अपनी कमज़ोरियों पर जाता है तब उसे याद आता है कि उसके पास असल में सबूत है।

इसलिए वह उन कुछ चीज़ों के बारे में सोचता है जिनके बारे में उसे जानने की ज़रूरत है, वह है गुरु का मूल उपदेश। उसे शाकाहारी भोजन अपनाने; शराब या नशीले पदार्थों से परहेज़ करने; निर्मल नैतिक जीवन जीने और प्रार्थना करने के अलावा और कुछ भी जानने की ज़रूरत नहीं है।

और वह प्रार्थना कैसे करे? अरे हाँ! उसे बताया गया है—भजन-सिमरन।

अचानक उसे राहत महसूस होती है और दूसरी बार कप में कॉफी डालने से पहले वह उस सुकून वाली जगह की खोज कर लेता है।